सत्ता का सुख

डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया

प्रथम संस्करण : 3 हजार 500
29 अप्रैल 2005
द्वितीय संस्करण : 1 हजार
26 मार्च 2016
योग : 4 हजार 500

मूल्य : 10/-

शुभकामना

दिव्य ध्वनि का संदेश पाकर,
वीर गुण जीवन में अपनाकर;
'शुद्धात्मा' को ध्येय बनाकर,
मानव जीवन को आज पाकर;
कर लो जन्म सफल तुम्हारा,
जन्मदिन है आज तुम्हारा ।

क्या/कहाँ

एक संभावना यह भी : 5 - 19
अनुगामिनी : 20 - 29
कौन जीता ? कौन हारा ? : 30 - 52

मुद्रक: सन् एन सन् प्रेस, तिलकनगर, जयपुर

सत्ता का सुख

लेखिका :
डॉ. श्रीमती शुद्धात्मप्रभा टड़ैया
बी.ए.ऑनर्स (स्वर्ण पदक प्राप्त)
एम.ए., पी-एच.डी.
फोन : (022) 55750723

प्रकाशक :
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015
फोन : 0141-2707458, 2705581
E-mail : ptstjaipur@yahoo.com

प्रकाशकीय

'सत्ता का सुख' आराध्य प्रकाशन; दिव्यध्वनि प्रचार - प्रसार ट्रस्ट मुंबई की ओर से प्रकाशित नवीनतम कृति है। इसमें 'एक संभावना यह भी' नामक नाटक में कैकेई द्वारा राम वनवास का वरदान मांगने के पीछे छिपे उद्देश्य को, कैकेई की त्याग भावना को दर्शाया गया है तथा अनुगामिनी नामक नाटक में राजुल के माता-पिता एवं राजुल की मन:स्थिति का चित्रण किया गया है एवं 'कौन जीता, कौन हारा ?'नामक नाटक में छह द्रव्यों का स्वरूप आज के राजनीतिक परिदृश्य में बड़े ही रोचक रूप में प्रस्तुत किया गया है।

डॉ.शुद्धात्मप्रभा टड़ैया चिंतनशील लेखिका हैं। उनके द्वारा लिखित रामकहानी 31000 की संख्या में प्रकाशित होकर जन-जन तक पहुंच चुकी है। बालकों में सदाचार और अहिंसक आचरण के संस्कार देने की दृष्टि से लिखे गए बालसाहित्य ने भी अपार ख्याति अर्जित की है।

बालमन कोमल होता है, उसमें बचपन में जो संस्कार डाले जाते हैं, वे अमिट छाप छोड़ते हैं। आज के इस वैज्ञानिक युग में बच्चों के मनोरंजन के जो नए-नए साधन विकसित हए हैं, वे हिंसाप्रधान हैं। T.V. में वह पिक्चर देखे या कार्टून - सभी जगह उसे बंदूक चलती नजर आती है। उदाहरण के तौर पर बच्चा यदि वीडियो गेम खेलता है, तो उसमें मारना- काटना ही सीखता है। जो जितना अधिक आदमियों, जानवरों को मारता है, वह विजेता होता है और इस तरह बच्चा अनजाने में ही हिंसा में आनन्द मनाने लगता है। खिलौने के तौर पर वह बंदूक ही खरीदना चाहता है। बच्चों की बात जाने दो, हम माँ-बाप भी बड़े गौरव से लोगों से कहते हैं – 'मेरे बेटे को गुडियों का खेल पसंद नहीं, वह बंदूकों से खेलना पसंद करता है, हर नई मॉडल की गन उसके पास है। इस प्रकार बच्चों में बचपन से ही हिंसक संस्कार समा जाते हैं और हमें पता भी नहीं चलता'; किन्तु 'ज्ञान' एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा समस्त बुराईयों से बचा जा सकता है। सही और सच्चा ज्ञान समय पर देना ही बुराईयों से बचने का एकमात्र उपाय है।

यह तो हम सभी जानते हैं कि हिंसक दृश्य, गेम, टी. वी. प्रोग्राम आदि हिंसक इमेजों द्वारा बच्चों के बचपन पर हमला निरंतर हो रहा है, जिससे बच्चे हिंसक बन रहे हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि जिन बच्चों को पारिवारिक - सामाजिक माहौल भी हिंसक मिलता है, उन पर इन हिंसक इमेजों का असर बहुत गहरा होता है। अत : आज के इस हिंसक प्रधान वातावरण में अहिंसक सिद्धांतों की आवश्यकता सबसे अधिक हो गई है।

बालकों की प्रथम गुरु माँ द्वारा सदाचार के संस्कार, तात्त्विकज्ञान और धार्मिक वातावरण घर में ही आधुनिक तरीके से दिए जाएँ- इस दृष्टिकोण से आराध्य- प्रकाशन विगत दो सालों से जैन नर्सरी, जैन के. जी भाग १,जैन के. जी भाग २, जैन के. जी भाग ३, चलो पाठशाला: चलो सिनेमा

भाग १ आदि बाल पुस्तकों का प्रकाशन कर चुका है ।

इन पुस्तकों द्वारा बालकों में अहिंसक संस्कार आसानी से घर में ही दिए जा सकते हैं। अल्पसमय में इन पुस्तकों के हिंदी दो संस्करण तथा अंग्रजी, मराठी, गुजराती- चारों भाषाओं में प्रकाशित होना ही इनकी उपयोगिता और लोकप्रियता का प्रमाण है।

मानव मस्तिष्क तो एक कम्प्युटर की तरह है, उसमें जो फीडिंग और प्रोगामिंग होगी, वैसा ही रिजल्ट मिलेगा। इस तथ्य को समझते हुए हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि हम बच्चों को उनकी शिशु अवस्था से ही ऐसी फीडिंग और प्रोगामिंग करें कि युवावस्था तक वह पूर्णरूपेण, सुसंस्कारित और सदाचारी बन जावे। इसी भावना से प्रेरित होकर शिशुओं से लेकर किशोरों में हम इन पुस्तकों के माध्यम से धार्मिक ज्ञान द्वारा सदाचार का ऐसा टीका लगा रहे हैं, जो उन्हें भविष्य में कुव्यसनों, दुराचारण एवं बुराईयों से बचाकर सत्पथ पर चलाएगा।

आज के ये छोटे-छोटे बच्चे कल का भविष्य हैं, अत: उनके मन में अहिंसक विचार उन्हीं माध्यमों से उसी शैली में पहुंचाने का प्रयास हम कर रहे हैं।

बच्चों के स्वस्थ बचपन के लिए हम अभिभावकों को ही सावधान होना होगा, उन्हें खतरनाक इमेजों से बचाना होगा और बुरे असर के खिलाफ गाईड भी करना होगा।

हमारा समस्त प्रकाशन इसी ध्येय को समर्पित है। विषयवस्तु और प्रशिक्षण की व्यवस्था हम कर सकते हैं, पर अपने बच्चों में संस्कार आपको स्वयं ही देने होंगे, उनके शिक्षण की व्यवस्था आपको ही करनी होगी।

दिव्य ध्वनि अर्थात प्रत्येक प्राणी को तीर्थंकरों के द्वारा बताया गया तत्त्व अपनी अपनी भाषा में समझ में आए। दिव्यध्वनि प्रचार - प्रसार ट्रस्ट, का भी मूल ध्येय यही है कि - तीर्थंकरों की वाणी को आधुनिक भाषा - शैली में, आधुनिक साधनों से जन - जन तक पहुँचाना और उसे हृदयंगम कराना।

तीर्थंकरों की वाणी को जन- जन तक पहुँचाना एक ऐसा कार्य है जो मानव जाति को विकासोन्मुख बनाए रख सकता है। हमारी अगली पीढ़ी को हिंसा, पापाचार एवं कुव्यसनों से बचा जा सकता है। तत्त्वज्ञान - श्रद्धान ही हमारे अनंत सुखी होने की सीढी है।

जीवों में मानव भव ही ऐसा भव है जिसमें जीवन की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि संभव है, परंतु इसके पड़ाव अनेक हैं।

हमारा उद्देश्य बालकों में सदाचरण, धार्मिक ज्ञान एवं अहिंसक जीवन शैली का प्रचार-प्रसार और प्रशिक्षण देना है। हमारे प्रकाशन ने आधुनिक शिक्षा प्राणाली को अपनाते हुऐ जैन नर्सरी, जैन के जी,भाग १; भाग २; भाग ३, चलो पाठशाला, चलो सिनेमा इत्यादि जैनदर्शन की ए टू

जेड़ बेसिक जानकारी देने वाला आठ पुस्तकों का पाठ्यक्रम तैयार किया है जो समस्त भारत में बहुत लोकप्रिय व प्रभावी रहा है । पिछले दो वर्षों में इनके दो संस्करण छप चुके है । अब तीन नई पुस्तकें भी सम्मिलित की जा रही हैं ।

देश-विदेश से इस पाठ्यक्रम के गुजराती एवं अंग्रेजी संस्करणों की बेहद माँग की जा रही है । इस योजना पर इस वर्ष लगभग रू १० लाख व्यय आवेगा । विशुद्ध जिन-वाणी के प्रचार-प्रसार में आपकी रुचि एवं तन - मन - धन से सहयोग हमें हमेशा ही मिला है, मिलता रहेगा - ऐसी हमें आशा है ।

" दिव्यध्वनि प्रचार - प्रसार ट्रस्ट " ने बालकों में जैन मतानुसार सात्विक जीवन हेतु संस्कार रोपड़ का एक कार्यकम तैयार किया है । वास्तव में संस्कार तो बालक माँ अथवा अपने घर से ही पाता है । जो कालान्तर में उसकी मूल वृत्ति का निर्माण करती है । इसलिए संस्कारित करने का समय तो वास्तव में ३ वर्ष की आयु से प्रारंभ होकर १८ से २० वर्ष तक की आयु तक ही रहता है । इसके बाद तो जीवन जिस रूप ढल चुका होता है, उस रूप व्यतीत हो जाता है । इसलिऐ कच्चे घड़े (बाल्यावस्था) को आँच (अच्छे धार्मिक संस्कारों) में पका देने पर फिर उसे चाहे जितना पानी में रखे (प्रतिकूल खराब अवस्थायें), घड़ा खराब नहीं होता ।

सदियों से माँ, दादी, नानी और घर की बुजुर्ग महिलायें परिवार में अच्छे संस्कारों का रोपण एवं धर्म का संरक्षण बहुत यत्नपूर्वक करती आई हैं । सच कहा जावे तो पीड़ियों से संचित यह बहुमूल्य थाती जो हमें ज्यों की त्यों उपलब्ध है उसका श्रेय महिलाओं को ही जाता है । इसीलिए घर में सुख, समृद्धि एवं स्वास्थ्य की वे आधार लक्ष्मी कहलाती हैं ।

परिवार के इस स्तंभ को वे आधुनिक परिवेश में ओर भी अधिक सुदृढता प्रदान कर सकती हैं ।

आज बहिने अपने खाली समय का उपयोग इस जनहितकारी एवं विकासोन्मुख कार्य में लगाकर सन्तुष्टि तो प्राप्त करेगी ही; बस अपने जीवन के नये अयामों को भी अविष्कृत करेगी

सभी बहिनें समय की इस आवश्यकता को समझें व हमारे ट्रस्ट के साथ जुड़कर आत्मकल्याण के साथ - साथ मानव - कल्याण में अपना भरपूर योगदान दें - ऐसी मंगल भावना है ।

आपके बहुमूल्य सुझाव सक्रिय सहयोग एवं प्रचार-प्रसार में भागीदारी ही इस ध्येय को शीघ्र सफल बनावेगा । हमें विश्वास है कि आप विस्तृत जानकारी हेतु निसंकोच हमसे सम्पर्क करेंगे ।

सभी जीव सन्मार्ग पर चलें- इसी भावना से विराम लेता हूँ ।

एक संभावना यह भी

कैकई : भैया! एक बात मुझे अभी तक समझ नहीं आई। सभी आदर्श महापुरुषों या नायक के नाम पर अपने बच्चों के नाम रखते हैं; पर मैं कैकई, तुम दशानन- ये रामकहानी के खलनायकों के नाम ही हमारे क्यों रखे गए? आखिर क्यों?

दशानन: मेरी भी समझ में यह बात कभी नहीं आई । बचपन से अभी तक मैं पापा-मम्मी से इस सवाल का जवाब पूँछता रहा हूँ, पर हमेशा उनका जवाब होता- अभी तुम छोटे हो, समझ नहीं पाओगे, बड़े होगे तब बताएँगे ।

कैकई : अब तो हम बड़े भी हो गए । मुझे बचपन का वह दिन अच्छी तरह याद है, जब एक बार हम दशहरा पर रामलीला देखने गए थे, तब सभी मेरी ओर इशारा कर कहते थे – 'देखो! एक कैकई वह बैठी है, घर तोड़नेवाली, फूंल से बच्चों को वन भेजने .....।'

दशानन: (बीच में ही) मेरा तो और भी बुरा हाल था । सभी कहते - 'देखो! वो रहा आज का दशानन, चलो जलाते हैं उसका पुतला ।'

कैकई : चलो, आज मम्मी - पापा से पूँछते ही हैं; उन्होने हमारे नाम ऐसे क्यों रखे? जिन्हें बताने पर हमारे मस्तक शर्म से झुक जाते हैं । मैं तो किसी को अपना नाम बताना ही नहीं चाहती ।

दशानन: मम्मी - पापा इधर ही आ रहे हें, चलो पूँछते हैं ।

(मम्मी - पापा प्रवेश करते हैं)

मम्मी : (बच्चों से) क्यों, आज क्या बात है? दोनों परेशान दिख रहे हो ।

कैकई : हाँ, मम्मी! वो दीपावली आ रही है, इसलिए....

मम्मी : (बात बीच में ही काटकर) इसमें परेशानी की क्या बात है? यह तो खुशी की बात है ।

दशानन: (चिढ़कर) दूसरों को खुशी होती होगी, पर हमें जिल्लत भोगनी पड़ती है, शर्मिंदगी झेलनी पड़ती है ।

मम्मी : क्यों?

दशानन: दीपावली के पहले दशहरा जो आता.....

पापा : (बीच में ही) बस, बस । मैं समझ गया । देखो बच्चों! तुम्हें अपने नाम पर शर्मिन्दा होने की कोई जरूरत नहीं .....

दशानन: (बात बीच में ही काटकर) हाँ! हाँ!! गर्व करना चाहिए हमें तो अपने नामों पर । एक ने **सत्ता के सुख** की लालसा में फूल से बच्चों को वनवास दिलाया । दूसरे ने अपनी **सत्ता की शक्ति** का दुरुपयोग किया, पर-स्त्री का अपहरण...

पापा : (बीच में ही) बस! बस!! बहुत हो गया । पर-त्री का अपहरण करना ही नजर आता है सबको! पर सीता का पवित्र रहना, किसी को नजर नहीं आया । सशक्त समर्थ, त्रिखंडी दशानन के शासन में उसके ही राज भवन में अपूर्व सुन्दरी सीता सुरक्षित रही, पवित्र रही- इसकी ओर तुम्हारा ध्यान क्यों नहीं गया ? मान लो यदि रावण सीता के साथ जबरदस्ती कर लेता तो, तुम्हीं बताओ राम क्या कर लेते ? कभी विचार किया है इस पर ?

कैकई : पर अपहरण तो .....।

मम्मी : (बात बीच में ही काटकर) देखो, बेटा! पहले ऐसा ही होता था। जिस कन्या पर राजा का दिल आता, वह उसका अपहरण कर ब्याह कर लेता, दशानन ने भी वही किया, किन्तु जब उसे राम के प्रति सीता की आसिक्त का पता चला तो उसने राम को सीता को सम्मान सहित वापिस करने का विचार बना लिया था।

कैकई : फिर वापिस क्यों नहीं की ?

मम्मी : वह राम को युद्ध में जीतकर सीता वापिस करना चाहता था, पर हारकर नहीं, संधि के रूप में भी नहीं । संधि करने को दशानन अपनी हार समझते थे, अपने को अपमानित महसूस करते थे और उन्हें **सम्मानित मौत मंजूर थी, अपमानित जीवन नहीं ।**

पापा : अजी, मै कहता हूँ आज कोई ऐसा दशानन तो बताओ जिसके घर में विश्वसुन्दरी सुरक्षित रह सके । मैं चाहता हूँ कि तुम **दशानन से न्याय-नीतिवान, चरित्रवान बनो**; बस उस जैसा मानी न बनना ।

दशानन: कैकेई का मंथरा के कहने में आकर 'वर' मांगना जगप्रसिद्ध है, उसकी निर्दयता सब जानते हैं; उसकी सत्ता लोलुपता सब .....

मम्मी : (बात बीच में ही काटकर) नहीं बेटा! ऐसा नहीं । जो हमें दिखता है, वह होता

नहीं; जो होता है वह हमें दिखता नहीं । हमें तो वह दिखता हैं, जो मीडिया हमें दिखाता है ।

कैकई : आप ही बताएँ कैकेई की क्या विशेषता थी?

मम्मी : **कैकेई जैसी बुद्धिमती, वीर, सर्वकला प्रवीण युद्ध में पति का सहयोग करनेवाली, परिवार के लिए बदनामी झेलने वाली, सौत के बेटों के लिए अपने सम्मानित जीवन को दांव पर लगाने वाली** नारी आज कहाँ देखने को मिलती है? हम चाहते हैं कि तुम भी अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर कैकेई के समान परिवार का हित चाहने वाली बनो ।

पापा : जो अपमान के विष का प्याला सौतन के बच्चों के लिए उसने अपने जेहन में उतारा, वह क्या कोई आज कर सकता है ?

कैकई : पापा! मैं समझी नहीं! उसने कौन सा विष का प्याला पिया । अपने वर का स्तेमाल कर वह तो ठाठ से राजमाता बनकर राजभवन में रही । अपने सौतन के बेटों को दर-दर भटकने पर मजबूर कर, उन्हें (सौंतो को) खून के आँसु रुलाए ।

मम्मी : नहीं बेटा, ऐसा नहीं हैं । ये राजनीतिक, कूटनीतिक चालें हैं । जो तुम समझ नहीं सकोगी । कैकेई जैसी बुद्धिमती नारी एक दासी के कहने में आए-ऐसा संभव ही नहीं । जो घटना घटित हुई, हमें बताई गई, जरूर उसके पीछे कुछ राज रहा होगा, कोई बहुत बड़ी प्लानिंग । जो घोषणा हुई हमें वह पता है, अंदर में क्या चाल चली गई, हम उससे अपरिचित हैं । जो भी हो, कैकेई बलि का बकरा अवश्य बनी है ।

पापा : हाँ! कौशल्या व सुमित्रा के वाग्जाल में वह फँस गई बेचारी ।

दशानन: पापा ! आप क्या कहना चाह रहे हैं? पर्दे के पीछे क्या हुआ होगा? उसकी एक झलक आप हमें बता सकते हैं क्या ?

पापा : हाँ! हाँ!! जब मैंने विचार किया तो **एक संभावना** नजर आई ।

दोनों : वो क्या पापा? बताइए ।

पापा : रामकहानी के बारे में तो तुम्हें पता ही है ।

दोनों : हाँ, हाँ याद है, पूरी कहानी याद है ।

पापा : तो बताओ सागरबुद्धि निमित्तज्ञानी ने दशानन के बारे में क्या भविष्यवाणी की थी?

कैकई : जनक की पुत्री के निमित्त से दशरथ के बेटों के द्वारा दशानन की मृत्यु होगी ।

पापा : देखो बेटा! इसी घटना के आधार पर राम वनवास की **एक संभावना यह भी** हो सकती है ।

दृश्यपरिवर्तन

(कौशल्या का दीवानखाना)

सुमित्रा : दीदी! आज आप चिंतित क्यों हैं ?

कौशल्या: हमारे बच्चे सर्व विद्याओं में प्रवीण हो गए हैं । मलेच्छ राजाओं को हराकर राजा जनक की सहायता कर उन्होंने अपने पराक्रम का परिचय भी दे दिया है । अब आर्यपुत्र कभी भी उनके राज्याभिषेक की घोषणा कर सकते हैं ।

सुमित्रा : यह तो खुशी की बात है । पर आप.....

कौशल्या: (बात बीच में ही काटकर) नहीं, बहन! हमारे लिए यह खुशी के पल नहीं । खुशी के पल तो तब होंगे जब हमारे बेटे अर्द्धचक्री सम्राट होंगे । क्या तुम्हें निमित्त ज्ञानी की वह भविष्यवाणी याद नहीं ?

सुमित्रा : उसे कैसे भुलाया जा सकता है? उसी के आधार पर तो रावण ने आर्यपुत्र को मारने का आदेश दिया था । आर्यपुत्र महलों के सुख छोड़कर दर - दर भटकने को मजबूर हुए थे, हमें भी विधवा का जीवन जीने को बाध्य होना पड़ा था । वैधव्य के नाटक के वे दिन क्या भूले जा सकते हैं? पर अब तो सब ठीक - ठाक है, अब चिंता क्यों? महाराज को मरा जानकर दशानन निश्चिन्त है, वह हम सबको भूल चुका है, हम क्यों उन दुर्दिनों को याद कर व्यर्थ ही दु:खी हों ।

कौशल्या: महाराज को मरा जान वह भले ही निश्चिन्त हो गया हो, पर हमें तो चिंतित रहना ही होगा, सावधान रहना ही होगा । कभी राज खुल गया तो..... ।

दूसरी बात दशानन उस घटना को भूल गया हो, पर मैं नहीं भूली । मैं अपने बेटों के बड़े होने का इंतजार कर रही थी, ताकि वे अपने पिताश्री के उस अपमान का बदला लें ।

सुमित्रा : यह कैसे संभव है ? वह त्रिखंड़ी राजा, हम उसी के आधीन मंडलेश्वर राजा । कहाँ राजा भोज ? कहाँ गंगू तेली ?

कौशल्या: सब कुछ संभव होगा । बुद्धि और विवेक से करने पर कुछ भी असंभव नहीं । मेरे बेटों के हाथों से वह अवश्य मारा जाएगा, बस उसके लिए हमें योजनाबद्ध तरीके से काम करना होगा । बच्चों को सुरक्षित रखना होगा । सावधान करना होगा । चलो महाराज को याद दिलाते हैं ।

सुमित्रा : महाराज को क्या याद दिलाना? महलों में रहकर भी हम उस घटना को भूल न सके, फिर आर्यपुत्र तो भुक्तभोगी हैं, वे कैसे भूल सकते हैं ? वे सही समय का इंतजार कर रहे होंगे?

कौशल्या: मुझे तो लगता है कि उस वनवास में कैकेयी जैसा नारीरत्न पाकर महाराज अपमान का दंश भूल गए हैं ।

सुमित्रा : दीदी, यदि आपको ऐसा लगता है , तो चलो! उनसे ही मंत्रणा करते हैं, बेटों की सुरक्षा के लिए वे अवश्य कोई उपाय करेंगे ।

पापा : इस प्रकार विचारकर दोंनो रानियां राजा दशरथ के मंत्रणाकक्ष में जाती हैं और राजा को विचारमग्न देख कर राजा के अन्तरंग भावों से अपरिचित कौशल्या गम्भीर हो कर कहती है : -

कौशल्या: नाथ! जो बात मेरे मन में है, क्या आप भी वही सोच रहे हैं?

दशरथ : मैं सोच रहा था कि अब बच्चे युवा हो गये है.....

कौशल्या: (बीच में ही) हे नाथ! मैं भी यही सोच रही थी कि अब बच्चे युवा हो गए हैं, वे वीर एवम् सर्व कलाओं में प्रवीण हैं । अत: अब आपको अपने अपमान का बदला लेना ही चाहिए ।

दशरथ : महारानी तुम किस अपमान की ओर इशारा कर रही हो ? मैं कुछ समझा नहीं ।

कौशल्या: स्वामी, आप तो बच्चों की बाल क्रीड़ाओं और राजपाट संभालने में सब कुछ

भूल गए, पर मेरी आखों के सामने हमेशा वही घटना घूमती रहती है ।

दशरथ : महारानी, पहेलियाँ न बुझाओ, साफ साफ कहो, कौनसी घटना ? कैसा अपमान ?

सुमित्रा : (मन में) दीदी सही कहती थीं । महाराज सब कुछ भूल गए ।

कौशल्या: नाथ क्या आप वह दिन भूल गए, जब त्रिखंडी दशानन ने अपने गुप्तचरों को आपको मारने के लिए भेजा था और अपने बचाव के लिए आपको दर-दर की खाक छाननी पड़ी थी ।

दशरथ : महारानी आज तुम ये कैसी बातें करने लगी हो?

कौशल्या: नाथ! ये बातें मैं आज तो कह रही हूँ, पर ये बातें मेरे मन में तभी से शूल की तरह चुभ रही हैं । जिस भविष्यवाणी को सुनकर दशानन ने हत्या जैसा निष्कृष्ट कार्य करने की आज्ञा दी थी, उसी भविष्यवाणी के आधार पर दशानन के समाप्त करने के लिए मैं अपने बच्चों के युवा होने की प्रतीक्षा कर रही थी । अब वह दिन आ गया है, जब हम अपने अपमान का बदला ले सकते हैं ।

दशरथ : महारानी, तुम आज तक क्रोधाग्नि में जलती रही और मुझसे चर्चा तक नहीं की । तुम व्यर्थ में ही उस छोटी सी घटना को इतना महत्व दे रही हो । तुम जरा सोचो हमारा अपमान किसने किया ? कैसे किया ? जो व्यक्ति हमें पहचानता तक नहीं, वह भला अपमान क्या करता ? किसका करता ? अपमान तो तब होता, जब कि वह हमें नीचा दिखाने को कुछ करता । अपनी सुरक्षा की व्यवस्था तो सभी करते हैं । वही दशानन ने किया था । मेरे ही पाप कर्म का उदय था, जो मुझे राजपाट छोड़कर वनमें भटकना पड़ा, वे तो मात्र निमित्त बने।

सुमित्रा : नाथ! निमित्त को भी तो हटाना पड़ता है, समाप्त करना पड़ता है।

दशरथ : यदि हम निमित्त को ही समाप्त करना चाहते हैं तो फिर हममें व दशानन में अन्तर ही क्या रह जाएगा ? उसने भी तो वही प्रयास किया था ।

कौशल्या: फिर भी.....

दशरथ : (बात बीच में ही काटकर) नहीं! नहीं!! अब तुम कुछ न कहो यदि दशानन

वैसा न करता तो मुझे कैकेई जैसी नारी रत्न कैसे मिलता ?

सुमित्रा : फिर भी.....

दशरथ : बस, बस! अब तुम सभी व्यर्थ की बातों से परेशान न हो, अपितु अपने वीर योग्य बच्चों के साथ सुखपूर्वक राज्य का उपभोग करो ।

कौशल्या: बेटों के साथ से आपका क्या तात्पर्य है? क्या आप युद्ध की तैयारी कर रहे हैं ?

दशरथ : हाँ, हाँ! युद्ध की ही तैयारी कर रहा हूँ, पर दूसरों से नहीं; अपितु अपने ही विकारों से, विभावों से, कर्मों से; अत: अब मैं राम का राज्याभिषेक कर निर्विघ्न होकर आत्मसाधना करना चाहता हूँ ।

सुमित्रा : योग्य बच्चों के युवा होने पर माता-पिता निश्चिन्त हो ही जाते हैं । हम भी आपकी भावना से सहमत हैं । हम भी आपके साथ आत्माराधना करेंगी । आपके कदम से कदम मिलाकर चलेंगी ।

दशरथ : रानीजी आप मेरा मतलब नहीं समझीं । मैं अब गृहस्थपना त्यागकर मुनिदीक्षा लेना चाहता हूँ अत: कल राम के राज्याभिषेक की घोषणा कर....

कौशल्या : (घबड़ाकर बीच में ही) नहीं, नाथ नहीं आपको यह आत्मघाती घोषणा मैं कभी नहीं करने दूँगी । मैं अपने बच्चों को खतरे में नहीं डाल सकती । राम के राज्यिभिषेक की घोषणा यदि दशानन तक पहुँच गई तो राम, लक्ष्मण, सीता विपत्ति में फँस सकते हैं; क्योंकि भविष्यवाणी के अनुसार अब उसे उन तीनों से ही अनिष्ट की आशंका होगी ।

दशरथ : कल सभी पुत्रों को बुलाओ । इस विषय पर वे ही मंत्रणा करेंगे । अभी मैं अपने स्वरूप के बारे में विचार करना चाहता हूँ ।

(राजा दशरथ स्वाध्याय कक्ष में चले जाते हैं)

सुमित्रा : दीदी ! अब क्या करें हम ? दीक्षा लेने को दृढ़प्रतिज्ञ महाराज से अब हम क्या अपेक्षा करें ? अब हमें ही कुछ करना होगा ।

कौशल्या : (सोचती हुई) एक उपाय है ।

सुमित्रा : क्या?

कौशल्या : यदि कैकेई साथ दे तो.....

सुमित्रा : (बीच में ही) कैकेई इसमें क्या कर सकती है ?

कौशल्या: वरदान मांग सकती है महाराज से! किसी को शक भी नहीं होगा ।

सुमित्रा : अपने मृदुव्यवहार, वीरता, बुद्धिमत्ता के कारण सम्मान के सिंहासन पर विराजमान वह ऐसा क्यों करेंगी? अपमानित जीवन क्यों जिएँगी ?

कौशल्या: मोह ! पुत्रमोह !! पुत्र की जीवनरक्षा के लिए हमें सब कुछ करना पड़ेगा । कैकेई को **राजी होना ही होगा, उसे अपमान का घूँट पीना ही होगा ।**

सुमित्रा : तो, फिर चलो, उसके पास ही चलते हैं ।

दृश्यपरिवर्तन

(रानी कैकेई का दीवानखाना)

कौशल्या: बहन! आज तुम इतनी चिंतित क्यों हो ?

कैकेई : मुनिराज के मुख से अपने पूर्वभव सुनकर महाराज दशरथ को जातिस्मरण हो गया और संसार की क्षणभंगुरता का ध्यान कर वैराग्य हो गया है । अत: वे अपने महामण्लेश्वर पद पर राम का राज्याभिषेक कर जैनेश्वरी दीक्षा लेने का निर्णय कर चुके हैं । महाराज के साथ-साथ भरत भी विरागी हो रहा है । उन दोनों को दीक्षा लेने से कैसे रोका जाए ? यह विचार कर रही हूँ ।

सुमित्रा : हम दोनों अभी महाराज के पास से ही आ रही हैं । हमने उन्हें बहुत मनाया, किन्तु वे तो अपने निश्चय पर अटल हैं । पर.....

कैकेई : (बीच में ही) पर क्या? आज कोई विशेष बात हुई क्या? आपने मेरे पास पधारने का कष्ट कैसे किया? मुझे बुला लिया होता ।

कौशल्या: काम ही ऐसा था! हमें तुम्हारे सहयोग की आवश्यकता है? महाराज तुम्हारी बात मानते हैं ।

कैकेई : आज मेरे सहयोग की क्या आवश्यकता आ पड़ी? आप महारानी हैं, जो चाहें प्राप्त कर सकती हैं ।

कौशल्या: नहीं ! नहीं !! मुझे जो चाहिए, वह तुम ही दे सकती हो ।

कैकेई : कहिए क्या आज्ञा है ?

सुमित्रा : आज्ञा नहीं, अनुरोध है ।

कैकेई : पहेलिया न बुझाओ दीदी! बताओ तो सही क्या बात है ?

कौशल्या : वचन दो निराश नहीं करोगी ।

कैकेई : वचन दिया, अब तो कहिए ।

कौशल्या : (कान में योजना बताती है) इस प्रकार भरत को भी कुछ दिन दीक्षा लेने से रोका जा सकता है तथा राम-लक्ष्मण और सीता सुरक्षित रहकर अपने पिता के अपमान का बदला ले सकेंगे, त्रिखंड का सिंहासन हासिल कर सकेंगे ।

कैकेई : आप जीत के प्रति इतनी आश्वस्त कैसे हैं ?

सुमित्रा : उसी भविष्यवाणी के आधार पर मैं कह सकती हूँ कि लक्ष्मण के हाथों वह त्रिखंडी प्रतिनारायण मारा जाएगा क्यों कि हमारे बेटे राम और लक्ष्मण क्रमश: बलभद्र और नारायण हैं ।

कैकेई : दीदी! भविष्य वाणी के आधार पर हम अपने बच्चों को दर-दर भटकने को कैसे मजबूर कर सकते हैं? उन्हें त्रिखंडी रावण से लड़ने को उकसाकर मौत के मुँह में कैसे ढ़केल सकते हैं ? हमारे ही बच्चे राम-लक्ष्मण, बलभद्र - नारायण हैं, हम कैसे कह सकते हैं ?

सुमित्रा : जो कोटिशिला को उठाएगा, वही नारायण होगा । वही प्रतिनारायण दशानन को मारेगा ।

कैकेई : तो लक्ष्मण ने कोटिशिला उठा ली थी क्या ?

कौशल्या: अभी नहीं! समय आने पर, दुनिया को विश्वास दिलाने के लिए वह यह भी करेगा । अभी यह कार्य करने पर दशानन चेत जाएगा, सक्रिय हो जाएगा ।

कैकेई : फिर भी.....

सुमित्रा : (बात बीच में ही काटकर) देखो बहन । आर्यपुत्र जैसी स्थिति पुन: हमारे बेटों के साथ न हो उसके लिए हमें यह करना ही होगा । हम अपने पुत्रों को सामने से आक्रमण नहीं करने देंगे; पर यदि दशानन युद्ध को ललकारेंगे तो हमारे पुत्र पीठ नहीं दिखाएँगे । इसकी ही व्यवस्था हम कर रहे हैं ।

कैकेई : कोई अन्य उपाय नहीं है क्या ?

कौशल्या: कल आर्यपुत्र ने हम सभी को इस विषय में मंत्रणा के लिए बुलाया है । तुम

बुद्धिमती हो, तुम स्वयं विचार करो । तुम जो भी निर्णय लोगी हमें स्वीकार्य होगा ।

(दोनों चली जाती हैं)

दृश्यपरिवर्तन

(राजा दशरथ अपनी पत्नियों और पुत्रों सहित कक्ष में विराजमान हैं । दशरथ विचारमग्न हैं । सभी रानियों में नीरवता छाई हुई है । ऐसा गंभीर वातावरण देखकर राम पूछते हैं)

राम : तात! आज ऐसी कौन सी समस्या आपके सामने उपस्थित हो गई कि हम समर्थ बेटों के होते हुए भी आप चिंतित हो गए । ऐसा कौन सा कार्य है, जो हम नहीं कर सकते । आज आपने हम सबको एक साथ इस तरह क्यों बुलाया है?

दशरथ : बेटा, अभी इस समय न्याय-नीति निपुण अर्द्धचक्री सम्राट दशानन का शासन है । हम सभी उसी के राज्य के अंतर्गत मंडलेश्वर राजा.....

शत्रुघ्न : (बात बीच में ही काटकर) तो इसमें चिन्ता की क्या बात है ? सम्राट को तो न्याय प्रिय होना ही चाहिए । यदि वह अन्यायी हो तो प्रश्न विचारणीय था ।

दशरथ : बेटा, तुम पहले पूरी बात तो सुनो । कोई भी सम्राट कितना भी न्यायी क्यों न हो, पर शक्ति हाथ में आते ही वह अन्यायी हो जाता है । फिर .....

शत्रुघ्न : (बीच में ही) पिता जी ! सम्राट दशानन के साथ तो यह बात भी लागू नहीं होती । हमने सुना है कि वे बहुत सदाचारी और दयालु हैं, हारे हुए राजाओं के साथ भी भाई के समान व्यवहार करते हैं, दुष्टों को भी माफ कर देते हैं और स्त्रियों का भी बहुत सम्मान करते हैं ।

दशरथ : हाँ, बेटे ! तुमने सही सुना है; उनमें बड़े-बड़े गुण हैं । इसलिये सभी राजा उनका सम्मान करते हैं, उनकी आज्ञा का पालन करते हैं और उनके एक इशारे पर अपने प्राणों की बाजी लगाने को भी तत्पर रहते हैं ।

कौशल्या:आप तो उस अति कायर राजा की प्रशंसा ही करने लगे । यदि वह इतना ही वीर था तो उसने वैसी नीच हरकत क्यों की ?

लक्ष्मण : पिताजी, माँ किस हरकत की ओर इशारा कर रही हैं ? क्या उसने आपके साथ कुछ धृष्टता की है ? यदि हाँ, तो मैं उसे अभी दण्ड देता हूँ ।

कौशल्या: बेटा! मुझे तुझ से यही आशा है । मुझे विश्वास है कि तू ही अब उस मानी का मान खण्डित करेगा । पूत के लक्षण पालने में ही नजर आते हैं । जब

तेरा जन्म हुआ था, तब लक्षणों को देखकर ज्योतिषी ने भी कहा था कि यह बालक शत्रुओं के समूह का नाश करने वाला होगा ।

लक्ष्मण : बस, बस; माँ! मेरी अधिक प्रशंसा नहीं करो । आप तो जल्दी से बतलाओ कि उस राक्षसवंशी ने कौन सी राक्षसी हरकत की है।

कौशल्या: बेटा! उसने अभी कोई भी हरकत नहीं की । पर वर्षों पहले की बात है, जब तुम पैदा भी नहीं हुए थे, तब दशानन को किसी निमित्त ज्ञानी ने बतलाया था कि राजा जनक की पुत्री के निमित्त से राजा दशरथ के पुत्रों के हाथों तुम मारे जाओगे । अत: **न रहेगा बाँस न बजेगी बांसुरी** के सिद्धान्त को अपनाते हुए उसने तुम्हारे पिताजो व राजा जनक को मारने के लिए गुप्तचर भेजे थे । उससे बचने के लिए तुम्हारे पिताजी को जंगल-जंगल भटकना पड़ा था ।

लक्ष्मण : अच्छा! ऐसी बात है, तो मैं भी उस सम्राट को जंगल-जंगल भटकने पर मजबूर कर दूँगा, उसे दर-दर का भिखारी बना दूँगा ।

कैकेई : बेटा, इस तरह उत्तेजना में काम करना उचित नहीं, **उत्तेजना में काम करने से काम बिगड़ते हैं, बनते नहीं ।** अभी हम दशानन से टक्कर लेने में समर्थ नही हैं । यदि तुमने जल्दबाजी में कोई कदम उठाया तो मुँह की खानी पड़ेगी । अभी हमारी समस्या यह है कि यदि अभी सम्राट दशानन को राम, सीता व तुम्हारे जीवित होने की जानकारी हो जाएगी, तो वह तुम्हें समाप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करेगा । हो सकता है कि अपनी पूरी सेना के साथ आक्रमण कर दे । अत: हमें अपनी आत्मरक्षा के लिए सैन्य सामर्थ्य बढ़ानी है । दशानन की सेना में सुग्रीव, हनुमान आदि बड़े-बड़े योद्धा हैं । वे दशानन के गुणों में अनुरक्त हैं, उसके अनन्य भक्त हैं । उसके एक इशारे पर मर मिटने वाले हैं । उसके बेटे व भाई भी अनेक शक्तियों के धारक हैं तथा वह स्वयं भी चक्ररत्न से सुसज्जित है, जिसका बाण निष्फल नहीं जाता । वह एक ही शत्रु समूह का नाश करने में समर्थ है । अत: हमें विद्याधर राजाओं को अपने पक्ष में करना होगा और उसके परिवार के किसी सदस्य को भी फोड़ना होगा, जिससे उसकी आन्तरिक कमजोरियों को जाना जा सके; क्योंकि **अकेली वीरता से कुछ नहीं होता । जब तक भेद-नीति का पालन न किया**

जाए; तब तक युद्धों में सफलता हाथ नहीं लगती ।

कौशल्या:परिवार के सदस्यों को फोड़ना तो बहुत बाद का विषय है । वह कार्य तो युद्ध के समय भी संभव है । फिलहाल तो दशानन के गुणों में अनुरक्त विद्याधर व भूमिगोचरी राजाओं के सामने ऐसी परिस्थितियाँ पैदा की जाए, जिससे राक्षसों व वानरवंशियों में मतभेद उत्पन्न हो जाए और उनके संकट में उनका सहयोग करके, उनसे मित्रता की जाए । यह सब गुप्तवास में ही संभव है ।

सुमित्रा : दीदी! जनक की पुत्री होने के नाते सीता व बड़े बेटे होने के कारण राम व लक्ष्मण पर ही दशानन की वक्रदृष्टि हो सकती है। अत: हमें कोई योजना बनाकर इन तीनों को ही गुप्तवास में रखना होगा ।

सुप्रभा : अभी से छिपाने की क्या जरूरत है? इन्हें अभी से सुख-सुविधाओं से वंचित क्यों किया जाए । जब मौका आएगा, तभी कोई उपाय कर लेंगे ।

राम : माँ! आप हमारी सुविधाओं की चिंता न करें । दशानन पिताजी को समाप्त करने के मामले में असफल हो चुका है । अत: चोट खाए हुए सर्प की भाँति, अब वह क्रोधित होकर आक्रमण ही करेगा । हम लोगों के कारण हमारी अयोध्या में खून - खराबा हो, यह हम नहीं चाहते; अत: हम तीनों अभी से गुप्तवास में ही रहेंगे । ठीक है, पिताश्री!

दशरथ : तुम सभी योग्य व बुद्धिमान हो । तुम जैसा उचित समझो, करो। मेरा मन अब इस राजपाट में नहीं लगता; मैं तो अब जैनेश्वरी दीक्षा लेना चाहता हूँ ।

सुप्रभा : तो फिर राजपाट कौन संभालेगा ?

दशरथ : राजपाट का क्या है? उसका जो कुछ होना होगा, वह होगा ही। मेरे पिताजी ने जब मुझे राज्याभिषेक किया था, तब मैं एक माह का था, फिर भी राज्य वृद्धि को प्राप्त हुआ । फिर मैं तो तुम्हारे राम-लक्ष्मण जैसे समर्थ बेटों के कंधों पर राज्यभार डाल रहा हूँ ।

सुप्रभा : राम-लक्ष्मण तो गुप्तवास पर जा रहे हैं ।

दशरथ : तो क्या हुआ भरत तो है ।

कैकेई : नहीं, यह नहीं हो सकता । राम के रहते भरत का राज्याभिषेक कैसे किया जा सकता है? हमारे वंश में परंपरा चली आ रही है कि यदि सुयोग्य हो तो

बड़े पुत्र को ही राज्य दिया जाए । अत: सर्वप्रकार योग्य राम के रहते भरत का राज्याभिषेक कैसे हो सकता है. ?

कौशल्या: पर राम अयोध्या में हैं ही कहां? वे तो गुप्तवास में जा रहें है।

कैकेई : फिर भी.....

कौशल्या: (बात बीच में ही काटकर) जब किसी योजना को क्रियान्वित करना हो तो उसके लिए परंपराओं से बाहर निकलना ही होगा परंपराओं में बंध - कर कोई बड़ा काम कैसे किया जा सकता है? मैं अपने बेटों को सम्राट देखना चाहती हूँ । उसके लिए सभी को कुछ त्याग करना ही पड़ेगा । वचन याद है न तुम्हें ?

कैकेई : (मन मारकर) दीदी! जैसी आपकी इच्छा।

सुमित्रा : दीदी, प्रजा इस बात को कैसे स्वीकार कर सकती है ? प्रजा की सम्मति भी तो अपना महत्व रखती है। अत: इसे ऐसा कोई विश्वसनीय रूप देना होगा जो कि प्रजा के गले में भी उतर सके व दशानन को भी किसी प्रकार का शक न हो ।

कैकेई : इसका एक उपाय है, मेरा वरदान राजा के पास सुरक्षित है; यह बात जग प्रसिद्ध है । अत: प्रात: काल जब आर्यपुत्र राम के राज्याभिषेक की घोषणा करेंगे, तब मैं भरत के लिए राज्याभिषेक व राम के लिए वनवास का वर माँगूंगी ।

सभी भाई:(एक साथ) नहीं, यह संभव नहीं । ऐसा करने से तुम्हारी बदनामी होगी, अपयश होगा, अपमान होगा ।

कैकेई : (दृढ़ता के साथ) प्राणों से प्रिय पुत्रों की सुरक्षा के सामने यश - अपयश क्या महत्व रखता है? जब कुछ परंपरा से हटकर करना है तो किसी न किसी को अपयश का भागी होना ही होगा । दूसरी बात यह है कि पुत्ररक्षा के लिए तो माताएँ जीवन की बाजी लगा देती हैं । तो मेरे लिए थोड़ा सा अपयश भोगने में क्या हानि है । फिर **यह नाटक ही तो है, नाटक में किसी न किसी को तो खलनायक का पार्ट करना ही होता है । मैं भी तो बस पार्ट ही कर रही हूँ ।**

सभी : नहीं, नहीं; हम ऐसा नाटक नहीं कर सकते ।

कैकेई : क्यों नही कर सकते? यदि इस व्यूहरचना को, इस नाटक का स्वाभाविकता प्रदान करनी है, तो यह सब करना ही होगा, अन्यथा सूक्ष्मदृष्टि प्रजाजनों और दशानन के सुगठित गुप्तचर विभाग का आशंकित होना असंभव नहीं है ।

लक्ष्मण : इस योजना के बारे में प्रमुख मंत्रियों से भी विचार-विमर्श किया जाना चाहिए ।

राम : नहीं, नहीं; ऐसा कदापि न करना; क्योंकि बात अधिक लोगों में जाने से उसका गुप्त रहना असंभव हो जाता है ।

लक्ष्मण : भरत राज्याभिषेक कराना कैसे स्वीकार कर सकता है? वह तो स्वयं ही पिताश्री के साथ दीक्षा लेने का इच्छुक है; इसीलिए वह इस मीटिंग में भी नहीं आया है ।

राम : इसकी जिम्मेदारी मेरी है । जब मैं उसे परिस्थितयों से अवगत कराऊँगा, तो वह अवश्य मानेगा ।

दृश्यपरिवर्तन

पापा : इस प्रकार राम, लक्ष्मण, सीता की सुरक्षा की दृष्टि से सभी परिवार वालों ने मिलकर एव सुनियोजित योजना बनाई होगी और फिर जो कुछ हुआ वह सब तो जगत के सामने है ही ।

दशानन : वाकई पापा! कैकेई महान हैं । रावण जैसे व्यक्ति ने भी अपमानित जीवन की अपेक्षा सम्मानित मौत स्वीकारी ।

कैकई : पापा! जगत में कहा भी जाता है कि **अपमान का दु:ख, मरणदु:ख से भी बड़ा है** । कैकेई ने अपमान का दु:ख झेला है । जो अपनी योग्यता से राजा - प्रजा के सम्मान के सिंहासन पर विराजमान थी, वह जब सबके वाग्वाणों का शिकार हुई होगी तो असहनीय नारकीय वेदना भोगी होगी उसने ?

मम्मी : हाँ बेटा! आज इतने वर्षों बाद भी जब हम उसे हीनता की दृष्टि से देखते हैं, तो उस समय प्रजा ने उसकी क्या दुर्दशा की होगी । उसका महल से बाहर निकलना मुश्किल हो गया होगा । घर में ही कैद हो गई होगी वह बेचारी । जरा कल्पना तो करो उसकी वेदना की ।

पापा : देखो! यश का जीवन सभी चाहते हैं । अपयश को गले लगाने वाले विरले ही होते हैं । जनता में अपयश न हो, मात्र इस बात के भय से ही राम ने अपनी निर्दोष पत्नी सीता को त्याग दिया था, उसी जनता के बीच अपमानित होती हुई कैकेई वर्षों रही ।

दशानन: महान थी कैकेई! उसकी महानता को कोई न देख सका, उसका त्याग कोई न जान सका ।

कैकई : हाँ, हाँ !! अब मैं समझ गई कि **सत्ता का सुख** तो राम-लक्ष्मण ने भोगा । राजमाता तो कौशल्या, सुमित्रा बनीं । पर कैकेई .....

पापा : (बात बीच में ही काटकर) बेटा! तुम गलती कर रही हो । राम ने भी सत्ता का सुख कहाँ भोगा ? बिना अपराध के अपनी पत्नी को दो - दो सजा सुनाई । पहले वनवास दिया, फिर अग्निपरीक्षा । सच तो यह है बेटा कि - **सत्ता मेंसुख** है ही नहीं ।

❋ ❋ ❋ ❋ ❋ ❋

अनुगामिनी

रानी : महाराज आज किस दुविधा में हैं?

राजा : आज राजुल के लिए त्रिखण्डाधिपति श्री कृष्ण अपने चचेरे छोटे भाई नेमिकुमार का रेश्ता लेकर आए हैं ।

रानी : आर्यपुत्र! इसमें दुविधा कैसी? यह तो प्रसन्नता की बात है । **सत्ता का सुख** भोगने वाले श्रीकृष्ण स्वयं सच्चे सुख के मार्ग पर चलनेवाले नेमिकुमार का रिश्ता लाए हैं । ऐसे महान कुल में संबंध तो महान पुण्य से ही होता है । लड़का भी सदाचारी, शांत स्वभावी, वैराग्य प्रकृति का है । हमारी बिटिया के अनुकूल है ।

राजा : उसकी वैराग्य प्रकृति ही तो मेरी दुविधा का मूल कारण है । यदि ब्याह के कुछ दिन पश्चात् ही उसने मुनिदीक्षा ले ली तो हमारी बेटी का जीवन.....

रानी : (बीच में ही) आप व्यर्थ ही परेशान हैं । प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने भी वर्षों गृहस्थ जीवन जिया था । इंद्र को अल्पायु नीलांजना भेजकर वैराग्य का निमित्त जुटाना पड़ा था, तब जाकर 83 लाख पूर्व पश्चात् उन्होंने मुनि दीक्षा ली थी ।

राजा : तुम सही कह रही हो । अच्छा दूसरी बात यह है कि राजुल में बचपन से तुमने जो धार्मिक संस्कार दिए हैं, वह अब फल-फूल रहे हैं । अत: वह तो शादी से ही इंकार कर रही है ।

रानी : आर्यपुत्र!हमारे जीवन में पूर्वकृत पुण्य-पापानुसार अनेक उतार-चढ़ाव आते हैं । अत: आध्यात्मिक संस्कार होने से जीवन में होने वाले उन उतार-चढ़ावों को साम्यभाव से सहने की शक्ति पैदा होती है और व्यक्ति में दृढ़ता आती है । हमारी बेटी अनुकूलताओं-प्रतिकूलताओं में साम्यभाव धारण करे - यही सोचकर मैंने उसको आध्यात्मिक संस्कार दिए हैं । जहाँ तक शादी से इंकार करने का सवाल है सो बचपन में सभी ऐसे ही मना करती हैं । मैं भी ऐसा ही कहती थी; पर देखो ! ब्याह हो गया तो आजतक आपके साथ हूँ ।

राजा : फिर भी..... ।

रानी : उसकी आप चिंता न करें । आप निश्चिंत होकर बात पक्की करें । उसे तैयार करना मेरी जबाबदारी है ।

सूत्रधार: इस प्रकार राजा को आश्वस्त कर रानी राजुल के पास जाती है और उससे

शादी के बारे में चर्चा करती है -

रानी : बेटा राजुल! राजकुमार नेमिकुमार सर्वगुण सम्पन्न, शांत स्वभावी, वैराग्य प्रकृति के हैं ।

राजुल: होंगे माँ! मुझे उससे क्या? मैं स्वाध्याय करने जा.....

रानी : (बीच में ही) सुनो बेटा! तुम्हारे पिताजी उनसे तुम्हारा संबंध पक्का करने के पूर्व तुम्हारी सहमति चाहते हैं ।

राजुल: माँ! आपको तो पता ही है, मैं शादी ही नहीं करना चाहती ।

रानी : क्यों?

राजुल: माँ! पहले मैं शास्त्रों का अध्ययन-मनन करना चाहती हूँ । मेरे मन में बहुत से प्रश्न है, बहुत सी शंकाएँ; उनका समाधान करना चाहती हूँ । मुझे मुक्तिपथ पर बढ़ना है अत: मैं योग्य गुरु की तलाश में हूँ ।

रानी : वह तो तुम शादी के बाद भी कर सकती हो ।

राजुल: नहीं माँ! शादी के बाद वह बात नहीं रहती ।

रानी : देखो बेटा! हमने तुम्हें जो वर खोजा है, वह स्वयं ही दिन-रात अध्ययन-मनन-चिंतन करता रहता है । वह तीन ज्ञान का धारी है । उसके साथ रहने पर तेरी समस्त शंकाओं का समाधान चुटकियों में हो जाएगा । उनसे अच्छा गुरु तुझे ढूँढने से भी नहीं मिलेगा । दिन-रात उनसे चर्चा करना,शंका समाधान करना ।

राजुल: सच माँ?

रानी : हाँ, हाँ ।

राजुल: माँ यदि ऐसा है तो मुझे कोई आपत्ति नहीं ।

सूत्रधार: राजुल की स्वीकृति की सूचना रानी राजा को देती है । राजा संबंध पक्का कर शादी की तिथि निश्चित कर देते हैं । शादी की तैयारियाँ जोर-शोर से प्रारंभ हो जाती है । नगर को सजाया जाता है । शादी के एक दिन पूर्व घर में गीत-संगीत होता है और राजुल की सखियाँ राजुल से कहती हैं-

एक सखी: राजुल ! अब तो तेरे ठाठ हो गए । अवधिज्ञानी है तेरा पति । उनके अवधिज्ञान से तूँ सब कुछ जान लेगी ।

दूसरी सखी: अरे । हमारे भी पूर्वभव पूँछना उनसे?

तीसरी सखी: पूर्वभव में क्या रखा है? भविष्य पूँछना हमारा ।

राजुल : (मन में) अरे! उनसे ऐसी छोटी-छोटी बातें पूँछना क्या उचित है? नहीं, नहीं! मैं तो उनसे सच्चे सुख का मार्ग पूँछूंगी? तत्त्वचर्चा करूँगी ।

चौथी सखी: अरे ! भविष्य तो तब पूँछेगी जब शादी होगी ? यदि शादी ही न हुई तो.....?

पहली सखी: अरे! ऐसी अपशकुनी बातें क्यों करती हो ?

चौथी सखी: इसमें अपशकुन क्या है । पूरे शहर को पता है कि उनके दो कल्याणक हो चुके हैं । वे तीर्थंकर होने वाले हैं, अत: वे कभी भी दीक्षा ले सकते हैं ।

दूसरी सखी: दीक्षा ले सकते हैं, तो इसका मतलब यह तो नहीं कि शादी ही न होगी ।

तीसरी सखी: अरी बहना! इन तीर्थंकर होने वालों का कोई भरोसा नहीं । इनको कभी भी, कुछ भी देखकर वैराग्य हो सकता है । तीर्थंकर मल्लिनाथ को ही लो - रथ पर सवार होकर बरात लेकर घर से निकले थे, पर रास्ते में सजे नगर की अनुपम शोभा देखकर जातिस्मरण हो गया और वैराग्य हो गया। अपनी मंगेतर को विलखता छोड़कर वन को चले गए और मुनि दीक्षा ले ली ।

पहली सखी: सबके साथ तो ऐसा नहीं हुआ, एकाध अपवाद तो होता ही है ।

दूसरी सखी: नेमिकुमार अपवाद नहीं है किसे मालूम?

चौथी सखी: कुछ भी हो । यह तो निश्चित है कि वह आयुपर्यन्त घर-गृहस्थी में नहीं रहेंगे, वे दीक्षा लेंगे ही । पर कब? बस इतना ही तो हमें पता नहीं है। पता नहीं इसके माता-पिता का ध्यान इस ओर क्यों नहीं गया?

तीसरी सखी: तो चलो, चलकर ध्यान दिला देते हैं ।

पहली सखी: पगली! वे अनुभवी हैं, बेटी के हित चिंतक हैं, उनका ध्यान सभी ओर गया होगा । हो सकता है ऋषभदेव जैसे ही वे भी वर्षों गृहस्थी में रहें ।

दूसरी सखी: संभावनाओं पर बेटी की जिंदगी दांव पर लगाने का उन्हें क्या अधिकार है? हो सकने को तो यह भी हो सकता है कि वे शादी के पूर्व ही दीक्षा ले लें ।

चौथी सखी: हाँ, हाँ । मुझे तो यही संभावना अधिक लग रही है ।

पहली सखी: क्यों ? ऐसी क्या बात तेरे ध्यान में है ।

चौथी सखी: सुना है कि द्वारिका में महाराज श्रीकृष्ण की राजसभा में एक दिन चर्चा चली

कि - सबसे अधिक बलवान कौन है? तब किसी ने तो श्रीकृष्ण का नाम लिया और किसी ने नेमिकुमार का । दोनों में बलप्रदर्शन हुआ और नेमिकुमार जीत गए । तब श्रीकृष्ण ने अपने को अपमानित महसूस किया । तब से वे कुछ चिंतित भी रहने लगे हैं ।

पहली सखी: क्यों? इसमें चिंता की क्या बात है?

चौथी सखी: सत्ता के सिंहासन पर विराजमान श्रीकृष्ण को यह डर सता रहा है कि विवाह के पश्चात् नेमिकुमार कहीं वह सिंहासन उनसे छीन न लें।

दूसरी सखी: इस डर का नेमिकुमार के वैराग्य से क्या संबंध है?

चौथी सखी: नेमिकुमार को विवाह के पूर्व वैराग्य हो जाता है तो श्रीकृष्ण निष्कंटक हो कर सत्ता का सुख भोग सकते हैं । अत: वह विवाह पूर्व नेमिकुमार को वैराग्य दिलाने का कोई न कोई प्रसंग अवश्य उपस्थित करेंगे ।

पहली सखी: यह सब तो तेरी कपोल कल्पना है । राजुल के प्रति तेरा अतिराग ही ऐसी व्यर्थ की कल्पनाएँ करवा रहा है । श्री कृष्ण स्वयं नेमिकुमार का संबंध तय करके गए हैं ।

तीसरी सखी: कपोल कल्पना ही सही । पर विचारणीय बात अवश्य है। यदि ऐसा हुआ तो हमारी राजुल का क्या होगा? कुछ भी हो एक बार तो हम राजा - रानी का ध्यान इस ओर दिलाएँगे ही । अपनी सहेली का जीवन यूँ बर्बाद न होने देंगे ।

पहली सखी: हाँ, हाँ !! सही है । चलो चलते हैं ।

राजुल : नहीं, नहीं ! तुम सभी व्यर्थ ही परेशान हो । मुझे तो शादी ही नहीं करनी थी । मैंने तो उन्हें गुरु रूप में ही स्वीकारा है । तीन लोक के होने वाले नाथ से यदि मेरा मिलाप एक दिन को भी हो जाए तो, मैं अपने को धन्य...

चौथी सखी: (बीच में ही) चंद पलों के अहोभाग्य के लिए जीवन भर दु:खों को गले लगाने को क्यों तैयार हो तुम? मैं तो कभी ऐसा न करूँ ? चंद पलों में सुख मिले या ना मिले किसने देखा? लंबा जीवन होगा, पति का साथ होगा; तो कभी - न - कभी सुख मिलेगा ही ।

तीसरी सखी: बहना! तुम सही कह रही हो । चार दिन त्रिलोकाधिपति की पत्नी बनने का सुख भोगकर वियोगी होना पड़े, उससे तो अच्छा है कि जीवनभर किसी राजा

की रानी बनकर रहो या सेठ की सेठानी । जीवनभर के दु:ख के बदले, चार दिन के सुख की चाह कहाँ तक उचित है? तुम्हारी जैसी सुंदरी के लिए तो एक - से - एक बढ़कर राजकुमार मिलेंगे ।

राजुल : सखियो! तुम व्यर्थ कल्पना कर परेशान न हो । मैं तो उनकी अनुगामिनी बन गई । वे रथपर चढ़कर आयेंगे तो मैं भी रथपर चढूँगी, वे वन में जाएँगे, तो मैं भी उसी पथ पर बढ़ जाऊँगी । वे भव-भव का नाश करेंगे तो मैं भी स्त्रीभव का नाश करूँगी । वे मेरे पति परमेश्वर बनें या न बनें इसमें शंका हो सकती है, पर वे मुक्ति पथ पर चलेंगे, सच्चा सुख प्राप्त करेंगे, जगत्-परमेश्वर बनेंगे – यह सुनिश्चित है । मेरी तो बस यही भावना है, यही कामना है कि मैं मुक्ति पथ पर उनकी **अनुगामिनी** बनकर सच्चा सुख प्राप्त करूँ ।

(इतने में राजा-रानी आते हैं और कहते हैं -)

रानी : ओ दुल्हन की सखियो !
किस चर्चा में उलझी तुम ?
राजुल तो कल बनेगी दुल्हन,
आज नगरी को बनाना है दुल्हन ।

राजा : जाओ ! जाओ !! अब तुम सब जाओ,
हर मोड़ पर तुम नजर घुमाओ ।
राजमार्ग निर्विघ्न करो तुम,
दुल्हे की अगवानी की तैयारी करो तुम ।
दीन-दु:खी कोई नजर न आए,
कहीं कोई कमी न रह जाए ।

रानी : नाथ ! मैं स्वयं निरीक्षण करने जाऊँगी,
दीन-दुखियों में किमिच्छक दान कराऊँगी ।
कैदियों को बंधनमुक्त करवाऊँगी,
मंदिर में शांतिपाठ करवाऊँगी ।
गली-गली सजवाऊँगी,
नगरी को दुल्हन बनाऊँगी ।

दृश्यपरिवर्तन

(द्वारिका में रानी वामादेवी और राजा समुद्रविजय बात करते हुए -)

रानी : हम तो मानकर बैठे थे,
नेमि की घर-गृहस्थी में रुचि नहीं ।
यही सोचकर हाथ पर हाथ धरे बैठे थे,
उसके मन की बात जानी नहीं ।
बेटा कृष्ण का है यह कमाल,
हमारे घर में हो रहा धमाल ।

राजा : मैं भी यही सोचा करता था -
संसार में इसका मन न रमेगा,
राज्यपद यह ग्रहण न करेगा ।
यह तो मुक्ति पथ का पथिक ही बनेगा,
यह तो शिवरमणी को ही वरेगा ।
पर जाने कैसे कृष्ण ने उसे तैयार किया ?
उनका हम पर यह महा उपकार हुआ ।

रानी : चलो-चलो, अब देर न करो ;
बारात ले जाने की तैयारी करो ।
अब तो नेमि दूल्हा बनने वाला है,
दुल्हन राजुल को लाने वाला है ।
किलकारियों से गूँजेगा घर हमारा,
राजपाट सम्हालेगा नेमि प्यारा ।

सूत्रधार: इसप्रकार -
पुत्रवधु आगमन की कल्पना में खो गई रानी,
पुत्र के राजतिलक के ख्यालों में खो गए राजा ।
पर नियति को कुछ और ही मंजूर था,
नेमि के तो अब् दीक्षा का काल पका था ।
अत: नेमि जब रथ पर सवार हुए,
कृष्ण तब उद्विग्न हुए ।

दाऊ को बताया जब अंर्तद्वन्द,
तब दाऊ मुस्काए मंद-मंद ।
फिर गंभीर होकर कहा कृष्ण से-
'परिचित हूँ तुम्हारे भावों से ।
नेमि का जबसे बल है चमका,
तब से तुम्हारा है माथा ठनका ।
बड़े ताऊ का बेटा है वह,
राजगद्दी का अधिकारी है वह ।
पर कृष्ण तुम निश्चिन्त रहो,
उसकी वैराग्य प्रकृति पर गौर करो ।
मात्र प्रराकमी होने से कुछ नहीं होता है,
साम्राज्य पर रागी का ही अधिकार होता है ।
फिर तुम क्यों यह भूल गए ?
तीर्थंकर होने वाला है वह ।
दो कल्याणक हो चुके जिसके,
दीक्षा कल्याणक भी होगा उसका ।
चित्त संसार से उदास है उसका,
वैराग्य प्रकृति भी है ही उसकी ।
यदि वैराग्य का निमित्त मिला उसको,
तो मुनिपद दूर नहीं उससे ।
राज्य पर अधिकार नहीं जताएगा वह,
शीघ्र मुनिपद धारेगा वह ।'
सुनकर दाऊ की बात,
आइडिया आया तत्काल ।
नेमि चले जब राजुल से बंधने,
तब कृष्ण बढ़े पशु बंद करने ।
सुना नेमि ने पशुओं का क्रंदन जब,
अवधिज्ञान लगाया तत्क्षण तब ।

नेमिकुमार:(मन में) नीलांजना भेजकर जो कार्य किया था इंद्र ने,
वही कार्य किया है आज भाई श्रीकृष्ण ने ।
साम्राज्य खोने का डर सताया है उन्हें आज,
मेरे लिए वैराग्य निमित्त जुटाया है उन्होंने आज ।

सूत्रधार: भाई का यह भय पता चला जब,
गिरि गिरनार की ओर कदम बढ़ाए तब ।
मुनिव्रत धारण को उद्यत हुए जब,
बाराती भी **अनुगामी** बने तब ।
जनता ने जय-जयकार किया,
मंत्री ने राजा से निवेदन किया -

मंत्री : द्वारिका से चले थे जो राजुल को वरने,
गिरनार चले गये वो मुक्ति वरने ।

राजा : ऐसा क्या निमित्त मिल गया ?
जो रास्ते में ही वैराग्य हो गया ।

मंत्री : बाढ़े में बंद पशुओं का सुना जब चीत्कार,
संसार की स्वार्थपरता पर ध्यान गया तत्काल ।

रानी : जाकर किया था स्वयं निरीक्षण मैंने,
पथ निर्विघ्न कराया था स्वयं मैंने ।
फिर आज किसने की यह गद्दारी है ?
क्या उसको अपनी जान नहीं प्यारी है ?

राजा : प्रिये ! हमारी आज्ञा का उल्लंघन करने की,
हिम्मत नहीं हो सकती अनुचरों में ।
कर सकता है यह कार्य वही,
आज्ञा चलाने की आदत होगी जिस में ।

मंत्री : राजन ! काम नहीं यह किसी गद्दार का,
षडयंत्र है किसी सम्राट का ।

रानी : नेमिकुंवर के ब्याहने से कौन अधिकार वंचित होता है ?
नेमिकुंवर के वैराग्य से कौन शक्ति संपन्न होता है ?

मंत्री : कुंवर के ब्याह से जो अधिकार वंचित होता है ?
कुंवर के वैराग्य से वही शक्ति संपन्न होता है ?

राजा : छोडो-छोडो, अब इन बातों को,
अन्य वर खोजें अब राजुल को ।

रानी : राजुल से अब कैसे बात करें ?
अन्य से शादी को कैसे तैयार करें ?
नेमि से शादी को मुश्किल से मानी थी,
वह तो मुक्ति पथिक की ही दीवानी थी ।

राजा : तुम्हीं समझा सकती हो अपनी बेटी को,
तुम्हीं राजी कर सकती हो राजुल को ।
तुम मुझसे अधिक समझती राजुल को,
उसके मन की बात भी आज समझना है तुमको ।

रानी : राजुल के मन को जानती हूँ मैं,
फिर भी एक बार कोशिश करती हूँ मैं ।
वह अब डोली पर कभी न चढ़ेगी,
मुक्ति पथ पर ही अब वह बढ़ेगी ।

राजा : अब मैं उसकी हर इच्छा पूरी करुँगा,
नहीं अपनी भावना उस पर लादूँगा ।
तुम भी अपनी कामना ना बतलाना,
बस एकबार उसका मन जानना ।
(रानी राजुल के पास जाकर कहती हैं -)

रानी : बेटा ! नेमिकुमार तो कंगन का बंधन तोड गए,
वे दीक्षा लेने गिरनार की ओर चले गए ।
तेरी शंकाओं का समाधान वे अब न करेंगे,
मौनव्रत ही वे अब धारण करेंगे ।
ब्याह न हुआ था उनसे अभी तक तुम्हारा,
अन्य से ब्याह का है अधिकार तुम्हारा ।
अपने मन की बात कहो अब तुम,
संसार में सदा सुखी रहो तुम ।

राजुल : संसार सुख की अब मुझे चाह नहीं,
पालकी में बैठना अब मुझे मंजूर नहीं ।
कुंवर मेरी शंकाओं का समाधान कर गए,
मुक्तिपथ पर चलने का मौन उपदेश दे गए ।
आर्यिका बन अब वन को जाऊँगी,
उनकी **पथानुगामिनी** कहलाऊँगी ।

सूत्रधार : नेमि की माँ ने सुना जब यह समाचार,
बेटा तो चढ गया है गिरनार ।
वधू को लाने जो गया था जूनागढ़,
मुनि बन गया वह, नष्ट करने कर्म गढ़ ।
अनुगामी बन गई राजकुमारी जूनागढ़,
वह भी आर्यिका बन गिरनार पर गई चढ़ ।
तब आश्वस्त किया रानी ने सबको,
संबोधित किया उन्होंने सबको -

वामादेवी: नेमि राजुल को वरने जाता है,
रथ पर चढ़कर ;
महा आश्चर्य हुआ था,
हमें यह सुनकर ।
बेटा दीक्षा लेने वन को चला गया,
यह सुनकर नहीं आश्चर्य हुआ ।
जिस सुख को पाने वह गिरनार चढ़ा,
वह सुख हमें भी पाना है ।
जिस पथ पर वह आगे बढ़ा,
उसी पथ का अनुगामी हमें बनना है ।
धन्य-धन्य है, वो राजुल-राजमती,
अनुगामिनी बन जो वन को चली ।

—o-o-o-o-o-o-o-o-o-

कौन जीता ? कौन हारा ?

सूत्रधार: स्वप्नीली रंगीन दुनिया में मस्त, गुलाबी कपड़े पहने जीवराज खड़े हैं । ये ज्ञानस्वरूपी हैं । जगत में जो जीवन है, जीवन्तता है, वह इन्हीं के कारण है । ये अपने को जीवराज कहलाना पसंद करते हैं । वे मानते हैं कि दुनिया की सारी वस्तुएँ मेरे उपभोग के लिए बनी हैं । मैं इनका स्वामी हूँ, इन्हें मेरी इच्छा -अनुसार चलना चाहिए , उनमें परिणमन भी मेरी सुख-सुविधानुसार होना चाहिए ।

'मैं चौड़ा और बाजार संकड़ा'- जीव की इस घमंड भावना का प्रतिनिधित्व करने वाला मानप्रसाद सीना ताने, गर्दन ऊँची किए आसमान की ओर निहारता हुआ नीले कपड़े पहने रौब से घूम रहा है ।

'दुनिया की सारी वस्तुएँ मुझे प्राप्त हो'- ऐसी चाहत रखनेवाले जीव की लालची प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करने वाला, कीमती वस्तुओं को अपनी हरी ड्रेस में समेटे लोभदास फूँक-फूँक कर कदम बढ़ा रहा है ।

'मन में कुछ, कहना कुछ, करना कुछ'- जीव की इस छल-कपट प्रवृत्ति को प्रदर्शित करनेवाली मायादेवी अपने सतरंगी कपड़ों में गोल-गोल चक्कर काट रही हैं ।

जीव की इच्छा के विपरीत काम होने पर, जीव के विवेक पर हावी होनेवाला, जीव की गुस्से की भावना का प्रतिनिधित्व करनेवाला यह क्रोधकुमार लाल कपड़े पहने हुए, पैर पटक - पटक कर तेजी से घूम रहा है ।

दुनियादारी से दूर अपनी धुन में मस्त रहने वाला समकित सफेद कपड़े पहने कुछ सोचते हुए धीमे-धीमे टहल रहा है ।अपने नाम के अनुरूप जीव की गलत मान्यताओं का पुष्टि करने वाला, काले कपड़े पहने ये मिथ्यामल्ल पधार रहे हैं ।

मिथ्यामल्ल : (प्रवेश करते ही) सभी आ गए क्या? (चारों तरफ निगाहें दौड़ाकर) अपने तो सभी साथी आ गए, पर उन अजीवों का क्या हुआ? वे नहीं आए अभी तक ?

क्रोधकुमार : (गुस्से से)अजीवों से और क्या अपेक्षा रख सकते हैं आप?

जीवराज : कुर्सी भी नही आई ।

मिथ्यामल्ल: कुर्सी तो पुद्गल लाने वाला था, जरा फोन तो करो उसे ! (तभी पुद्गल दरवाजे से झांकता है ।)

पुद्गल : (मन में) अरे! जीवराज के सभी विश्वसनीय धुरंधर साथी यहाँ मौजूद हैं, पर ओपोजिट पार्टी का एक भी नहीं है । मैं अकेला अंदर जाकर क्या करूगाँ? चलो आ ही गया हूँ, तो इनकी बातें सुनता हूँ । ये बड़े-बड़े जन मिलकर क्या करना चाहते हैं? आज इन्हें हम अजीवों के साईन की जरूरत क्यों आ पड़ी ? (दरवाजे से कान लगाता है ।)

मानप्रसाद : फोन करने की कोई जरूरत नहीं । भले ही मीटिंग हमने बुलाई है, पर सत्ता की कुर्सी तो सभी चाहते हैं । सत्ता का सुख सभी भोगना चाहते हैं । सबको समय पर आना चाहिए । थोड़ी देर और इंतजार कर लेते हैं ।

लोभदास : इंतजार करने की क्या जरूरत है ? उनका नहीं आना ही अच्छा है । हम सारी मलाईदार ***POST*** आपस में ही बाँट लेते हैं ।

मायादेवी: लोभदास ने सही कहा । फटाफट मीटिंग शुरू करो और प्रधान मुद्दों पर उनके आने से पहले ही निर्णय ले लो । सत्ता हासिल करने के लिए यह सब करना ही पड़ता है ।

समकित : नहीं बहनजी ! यदि हममें योग्यता होगी तो सत्ता हमें मिलेगी ही; नहीं होगी तो न सही; पर छलकपट द्वारा हम सत्ता हासिल नहीं करेंगे ।

क्रोधकुमार : महाशय ! हर क्षेत्र में शांति से काम नहीं चलता । सत्ता तो छल-बल से ही हासिल होती है ।

मायादेवी : हाँ,हाँ ऐसा ही है । हमारे लीडर जीवराज हैं, वे राजनीतिक दाव पेंच में माहिर हैं । जब वे अपने पैतरों का स्तेमाल करें, तब हे समकित भाई ! आप कृपाकर अपनी इस शांति का राग नहीं अलापना; वरना बना बनाया खेल बिगड़ जाएगा ।

क्रोधकुमार : (मायादेवी का समर्थन करते हुए) तब हमारे हाथ कुछ नहीं लगेगा और खर्चा होगा सो अलग।

लोभदास : हैं ! क्या चुनाव में खर्चा भी होता है ?

मानप्रसाद : हाँ होता है, लाखों में होता है ।

मिथ्यामल्ल : पर बाद में मिलता भी है, बहुत कमाई है ।

लोभदास : गारंटी है क्या ?

मिथ्यामल्ल : इलेक्शन जीते तो ..... ।

लोभदास : मल्ल जी ! मैं तो बनिया हूँ । संभावनाओं पर काम नहीं करता। जेब का खर्च कर कुछ नहीं चाहिए । मुफ्त में मिलता हो तो सब कुछ.....।

क्रोधकुमार : (बीच में ही बात काटकर) मुफ्त में कुछ नहीं मिलता । कुछ पाने के लिए हमेशा कुछ न कुछ कीमत चुकानी ही पड़ती है ।

मानप्रसाद : महाशय । हमें कुर्सी हथियानी है । हर हालत में पानी है । हम उनसे हार नहीं सकते । उसके लिए हमें भले ही कुछ भी क्यों न करना पड़े ? हम करेंगे । खर्चा भी करेंगे.....

क्रोधकुमार : (बीच में ही) जरूरत होगी तो गोलियां भी चलाएँगे ।

समकित : (शांति से समझाते हुए) प्रसादजी ! इस विश्व की सभी व्यवस्था ऑटोमेटिक पद्धति से सुचारु रूप से चल रही है, कहीं कोई व्यवधान नहीं हैं । सही बात तो यह है कि नेता की जरूरत ही नही है ।

मिथ्यामल्ल : अजी, सब व्यवस्था व्यर्वस्थित ऑटोमेटिक चल रही है, इसीलिए तो हम उसके कर्त्ता-धर्त्ता बनना चाहते हैं ।

मायादेवी : 'वस्तुत:' हमें करना कुछ करना-धरना नही हैं, बस करने-धरने का नाम (यश) चाहते हैं ।

मानप्रसाद : इस दुनिया में नाम ही अमर है, हम तो मरनेवाले हैं, अत: हे समकित महोदय ! साम,दाम,दण्ड,भेद- जैसे भी हो हमें तो कुर्सी पर कब्ज़ा करना है ।

समकित : नहीं, मेरा मन गवाही नहीं देता । मैं यह सब नहीं कर सकता । मैं तो सदा सत्य का ही साथ दूँगा।

मानप्रसाद : तो आप जा सकते हैं । शांति व सत्य से मोक्ष मिल सकता है, कुर्सी नहीं, **सत्ता का सुख** नहीं ।

समकित : धिक्कार है ऐसी कुर्सी पर! मुझे शांति व सत्य की कीमत पर कुर्सी नहीं चाहिए, सत्ता नहीं चाहिए । मुझे तो मुक्ति चाहिए, मुक्ति । मैं जा रहा हूँ।

(चला जाता है)

(समकित को बाहर आते देखकर पुद्गल खंभे के पीछे छिप जाता है और सोचता है ।)

पुद्गल : (मन में) अच्छा, तो ये बात है । कुर्सी इसीलिए मुझसे मंगाई गई थी,पर मैं तो कुर्सी लाना भूल ही गया । चलो,चलकर कुर्सी लेकर आता हूँ ।

(पुद्गल चार कदम बढ़ाता है, तभी क्रोधकुमार की जोर-जोर से आवाज़ सुनाई देती है । पुद्गल पुन: कान लगाकर सुनने लगता है ।)

क्रोधकुमार : आठ बजे का टाईम दिया था, नौ बज गए अभी तक कोई नहीं आया । मैं जा रहा हूँ ।

मिथ्यामल्ल : (मन में) काल तो 10 बजे आएगा, मीटिंग तो तभी शुरू होगी । (प्रगट में) पांच मिनिट और रुक जाओ ।

क्रोधकुमार : अजी पांच मिनिट का कहकर ही तो आपने बुलाया था । मैं जानता था कि ये मीटिंग इतनी जल्दी समाप्त होने वाली नहीं । खाने-पीने का न सही, पर कम-से-कम कुर्सियों का इंतजाम तो करना था ।

लोभदास : पता है कुछ । कुर्सियां मंगाने में खर्चा कितना हो जाता? पांच-दस मिनिट खड़े रह गए तो क्या बिगड़ गया?

मायादेवी : (मन में) पुद्गल के खिलाफ कान भरने का अच्छा मौका है । (प्रगट में)मंगाई थी भाई, मंगाई थीं । कुर्सियाँ लाने का काम पुद्गल को सौंपा था । पर वह धोका दे गया तो हम क्या करें?

पुद्गल : (मन में) ये मायादेवी अपनी मायाचारी से बाज न आईं । मुझे तो एक राजा की कुर्सी लाने को कहा था । सच ! **यथा नाम तथा** गुण वाली हैं वे । वे ही ऐसा बर्ताव न करेंगी तो फिर कौन करेगा ?

क्रोधकुमार: आपने क्या इंतजाम किया था ? मुझे उससे लेना - देना नहीं । पर मैं जमीन पर बैठ सकता नहीं और ऐसे खड़े-खड़े भी अब रह सकता नहीं । मैं जा रहा हूँ।

मिथ्यामल्ल : जाओगे, तो कुर्सी कैसे पाओगे ?

क्रोधकुमार : देखो यहाँ न **A.C** है, न पंखा । गर्मी से मेरा बुरा हाल है ।

मिथ्यामल्ल : सत्ता पाने वाला गर्मी-सर्दी, भूख-प्यास,दिन-रात कुछ नहीं देखता । यदि इतने से थक जाओगे तो कुर्सी पर कैसे बैठोगे ?

क्रोधकुमार : भाईसाहब! ऐसी कष्टदायी कुर्सी आपको मुबारक! मैं तो चला ।

(क्रोधकुमार बाहर निकलने लगता है)

पुद्गल : (मन में) यहं क्रोधकुमार इधर ही आ रहा है । समकित जैसे यह नीची नजर करके जाने वाला नहीं । वो आए उससे पहले ही मैं निकल पड़ूँ तो ही अच्छा है । (चला जाता है)

जीवराज : जल्दी आ जाना ।

मायादेवी : हाँ,हाँ! क्यों नहीं? कुछ खास बात हो तो मोबाइल कर देना । मेरा नंबर तो याद है ना ।

मिथ्यामल्ल : तुम्हारा नंबर कैसे भूल सकते हैं? नम्बरों में जो सबसे टेढ़ा है, वही नम्बर है तुम्हारा 8 बार 8 (8 8 8 8 8 8 8 8)

लोभदास : बहनजी! क्या बात है? कितनी टेढ़े हैं तुम्हारे अंदर ?

(माया मुस्कुराती है और चली जाती है । लोभ की निगाहें दरवाजे पर ही टिकी रहती हैं ।)

जीवराज : (लोभ की निगाहें दरवाजे की ओर देखकर) क्यों भाई लोभ जी! क्या अब तुम भी साथ छोड़कर जाना चाहते हो ?

लोभदास : नहीं, जी नहीं; मैं इतनी जल्दी आपका साथ छोड़ने वाला नहीं। सब चले जाएँ तो भी इस संसार में तो अंत तक मैं आपके साथ रहूँगा ।

जीवराज : हाँ, तुम और मिथ्यात्व ही तो हो जो मेरे वफादार हो,अंत तक साथ देने वाले हो ।

लोभदास: (मन में) जीव भाई, गल्ती कर रहे हो । मिथ्यात्व तुम्हारा नहीं कुर्सी का वफादार है । कुर्सी छूटते ही सबसे पहले यही साथ छोड़ेगा और हम चारों के बड़े भाई अनन्तानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ को भी साथ ले जाएगा ।

(प्रगट में) हाँ,हाँ कुर्सी पर बैठाने में सबसे सशक्त साथी मिथ्यात्व ही है । उसके सहयोग बिना कुर्सी हासिल नहीं हो सकती ।

जीवराज : जरा माया को मोबाइल करना । उसे गए काफी देर हो गई, अभी तक आई नहीं ।

मिथ्यामल्ल : वह आने के लिए नहीं गई थी ।

(लोभ नंबर लगाता है, घंटी बजती रहती है ।)

माया : (मोबाइल पर नंबर देखकर मन में) अरे! यह तो लोभ का फोन है । जरूर बुलाने के लिए फोन कर रहा होगा । कैसे टालूँ । (सोचने लगती है)

मिथ्यामल्ल : क्या हुआ? घंटी बज रही है ना । वह फोन नहीं लेगी । तुम्हारा प्रयास व्यर्थ है । माया की सब माया मैं जानता हूँ ।

जीवराज : माया की एक माया नहीं जानते तुम । रिजर्व सीट की हकदार है वह! बात करेगी वह, जरूर करेगी ।(लोभ के मोबाइल पर घंटी बजती है) लो आ गया देवी जी का फोन ।

लोभदास : हलो! हलो!! हाँ कितनी देर में आ रही हो ?

मायादेवी : धर्म आदि सभी आ गए क्या ?

लोभदास : नहीं, अभी तक नहीं ।

मायादेवी : (सोचते हुए) फिर एक काम करो, तुम लोग भी रवाना हो जाओ।

लोभदास : क्यों?

मायादेवी : जब तक तुम तीनों वहाँ हो, वे आने वाले नहीं ।

लोभदास : क्यों ?

मायादेवी : पैसों के अलावा तुम्हारी बद्धि नहीं चलती । बार-बार क्यों-क्यों? क्या किए जा रहे हो । सीधी सी बात हैं । हमारे चार-चार प्रतिनिधि वहाँ मौजूद हैं और वह अकेले ..... ।

लोभदास : (बात बीच में काटकर) उससे क्या होगा?

मायादेवी : यह मायाचारी की बात है, तुम नहीं समझोगे । जीव को फोन दो । (लोभदास जीवराज को फोन देता है)

जीवराज : बोलो माया, क्या बात है ?

मायादेवी : तुम तुंरत सभी साथियों को विदा कर दो । अजीव तुंरत आ जाएँगे ।

जीवराज : फिर अपने बहुमत का क्या होगा ?

मायादेवी : यही देखकर तो वे नहीं आ रहे हैं ? **जो तुमसे कह गया, वो उनसे भी कह गया है ।**

जीवराज : ठीक है । मिथ्यामल्ल से सलाह-मशविरा करता हूँ।

मिथ्यामल्ल: क्या बात है ?

(जीवराज सारी बात विस्तार से कान में बताता है)

मिथ्यामल्ल : वह सही कह रही है । हमें चले जाना चाहिए । उन अजीवों पर तुम अकेले ही भारी हो । हम लोगों के जाने पर भी बहुमत अपना ही रहेगा क्योंकि छह द्रव्यों में से हम पांच तो अरूपी हैं। अरूपी के वोट तो हमें मिलेंगे ही।

जीवराज : ठीक है, ठीक है । तो तुम सभी अब जल्दी जाओ । 10 बजने वाले है । काल 10 बजकर 10 मिनिट पर आने वाला था। उसने तुम्हें देख लिया तो बात बिगड़ जाएगी ।

मानप्रसाद : हैं ! 10 बजे ..... । हमें तो 8 बजे बोला था ।

मिथ्यामल्ल : हाँ आपस में प्लानिंग करने को मात्र विश्वसनीय साथियों को ही जल्दी बुलाया था ।

लोभदास : तो फिर हिन्दुस्तानी टाईम ..... ।

मिथ्यामल्ल : (बीच में ही) अब बातें बाद में करेंगे । जल्दी चलो ।

(मिथ्यामल्ल,लोभदास,मानप्रसाद- तीनों चले जाते हैं । जीव घूमता रहता है ।)

दृश्यपरिवर्तन

सूत्रधार : दुनिया में दिखाई देने वाली सभी वस्तुओं का प्रतिनिधित्व करने वाले, यह पुद्गल महाशय हैं । यह जीवराज की प्लानिंग छिपकर सुनकर अपने घर पहुँचते हैं । (पुद्गल के घर पहुंचने पर)

वाणी : आज मीटिंग जल्दी खत्म हो गई क्या ?

पुद्गल : नहीं, कुर्सी ले जाना भूल गया था, वही लेने आया हूँ ।

वाणी : ऐसे खोए-खोए क्यों बोल रहे हो? कुछ परेशानी है क्या ?

पुद्गल : हाँ, यह मीटिंग जीव ने हम अजीवों पर राज करने के लिए बुलाई है । वह अपने सर्मथक सभी साथियों के साथ उपस्थित है । बुद्धि और वोटिंग (बहुमत) - दोनों में वह जीत जाएगा ।

वाणी : चिंता क्यों करते हो? माना हमारे पास ज्ञान नहीं हैं, पर रूप है तुम्हारे पास । बड़े- बड़े ज्ञानियों को इस रूप पर मरते देखा है । यह जीव भी रूप के मोहजाल में फँस जाएगा, भाषा की जुल्फों में भटक जाएगा इससे बचकर यदि वह जीत भी गया, तो मैं इस कुर्सी में वशीकरणमंत्र लगा देती हूँ । वह

यदि इस पर बैठेगा भी तो हमारे अनुसार ही चलेगा । जहाँ तक बहुमत का सवाल है, सो आप भूल गए कि जीव के इन साथियों को वोटिंग का अधिकार ही नहीं है। यह मीटिंग तो विश्व के स्थायी मेम्बरस् की है । मुझे विश्वास है कि आप अपने स्थायी मेम्बरस् धर्म,अधर्म, आकाश और काल को जीव के विरुद्ध अजीव की एकता के झंड़े तले अपनी मनोहारी भाषा से ले ही आएँगे । फिर भी यदि जीव दादागिरी दिखाते हुए अपने साथियों का साथ लेता है तो वह अनन्त है और हम संख्यात, असंख्यात और अनन्तान्त हैं । इस प्रकार संख्या की दृष्टि से भी हम जीव पर भारी पड़ने वाले हैं !

बस, आप एक बात ध्यान रखना - क्रोध को अपने पास न आने देना क्योंकि उसके आते ही विवेक नष्ट हो जाता है । विवेक समाप्त होते ही हार हमारे चरण चूमने लगती है । आप निश्चिंत होकर जाएँ । शांति के साथ जीत की वरमाला पहनकर आएँ ।

सूत्रधार : वाणी की बात पर विचार करता हुआ पुद्गल कुर्सी लेकर धीरे - धीरे जाता है । वहाँ पहुंचकर अकेले जीव को देखकर आश्चर्य के साथ पूँछता है।

पुद्गल : अरे ! अभी तक कोई नहीं आया । मैं सोच रहा था-मैं ही लेट हूँ ।

जीवराज : किसी को समय की कीमत कहाँ है? सब अपनी मर्जी के मालिक हैं ।

पुद्गल : सॉरी भाईसाहब! तुम्हारे जैसा ज्ञानमय तो मैं हूँ नहीं । मैं तो अपना काम कभी छूकर, कभी चखकर, कभी सूँघकर, कभी देखकर और कभी सुनकर चलाता हूँ । आज न मुर्गे ने बांग दी, न सूरज अपनी तेजी से चमका । सर्दी में सब लिहाफ़ (रजाई) में घुसे थे, समय का पता ही न चला । पर काल तो समय का पाबंद है, वह अभी तक क्यों नहीं आया ? तभी दरवाजे पर टिक्-टिक् की आवाज सुनाई देती है । (पुद्गल आवाज सुनते हुए) अरे कौन आया? काल जैसी आवाज लगती है । अरे भाईसाहब! आप अरूपी हैं, जरा जोर से आवाज करो तो मैं तुम्हें पहचानूँ ।

(जोर-जोर से टिक्-टिक् करता हुआ धूप-छाँव कपड़े पहने काल प्रवेश करता है ।)

जीवराज : (चिढ़कर व्यंग्य करते हुए) समय से पधार गए महानुभव !

पुद्गल : (चमचागिरी करते हुए) आपकी तो समय की पाबंदी प्रसिद्ध है । दुनिया इधर

से उधर हो जाए, पर आप एक सेकंड भी लेट नहीं होते। सभी आप को देखकर घड़ियाँ मिलाते हैं । पर आज .....

काल : (बीच में ही विनम्रता से) महोदय! मैंने पहले ही जीव से निवेदन किया था कि मैं 10 बजकर 10 मिनिट 10 सेकंड पर आऊँगा । मेरे सारे प्रोग्राम निश्चित हैं, उनमें फेरफार करना संभव नहीं अत: निश्चित समय पर मैं अवश्य आऊंगा, उससे पहले मैं नहीं आ सकता। पर ये आठ बजे की जिद्द.।

(इतने में धर्म, अधर्म, आकाश, भी आ जाते हैं, उन्हें आता देखकर)

पुद्गल : (बात बीच में ही रोककर) जाने दो,जाने दो । ठीक है समझ गया । भाइयो! ये दृढ़निश्चयी महानुभव हम सबके परिवर्तन में निमित्त हैं । इनके वाक्य अचल-अटल होते हैं । इन्होंने न केवल स्वयं अपनी अपितु हमसभी द्रव्यों की समस्त पर्यायों को व्यवस्थित एक क्रम में डाल रखा है । अत: जो काम जिस समय पर होना होता है, वह उसी समय पर होता है, एक सेकंड़ भी आगे पीछे नही । इनके द्वारा होने वाले सारे परिणमन अपने-अपने क्रम में नियमित हैं, निश्चित हैं अत: हमारे सारे कार्य अपने -अपने क्रम में अपने समय में होते ही हैं । विशेष क्या कहूँ ? समय की महिमा से सब परिचित ही हैं ।

(सभी श्रोता ताली बजाकर स्वागत करते हैं)

जीव : (मन में) क्या बात है? पुद्गल काल की लल्लो - चप्पो क्यों कर रहा है ? आज इन्हें अपनी मनमानी करने दो, जो कुछ कहना है, कहने दो। पर कल तो मेरा है । एक बार मैं कुर्सी पर बैठ जाऊँ, मेरी ताजपोशी हो जाए बस्स....। सारी दृढ़ता धरी रह जाएगी । मैं तो अपनी मर्जी से चलूँगा ही, इन्हें भी अपने इशारों पर नचाऊँगा । (प्रगट में) काम समय पर करना अच्छी बात हैं, पर हमें अपने साथ-साथ दूसरों के समय का भी ध्यान रखना चाहिए ताकि हमारी वजह से दूसरों का समय व्यर्थ में ही बर्बाद न हो।

पुद्गल : (विनम्रता से) धर्म जी! आप तो हमेशा हम जीव- पुद्गलों की गति में सहायक होते हैं, सर्वत्र विद्यमान रहते हैं । आप कैसे लेट हो गए ?

जीव : (चिढ़कर व्यंग्य से) बहुत दू - - - - र से आए हैं, ट्रेफिक में फँस

गए होंगे ।

पुद्गल : (मन में) राजनीति में किसी से बुराई मोल नहीं लेना चाहिए । पता नहीं कब, कौन, कहाँ काम आ जाए । यह जीव सबसे पंगा ले रहा है । मैं चुप ही रहता हूँ, इसी में मेरी भलाई है ।

अधर्म : देखिए महाशय! आपको व्यंग्य करने की कोई जरूरत नहीं । आप यह बात समझ लीजिए कि हम चारों निष्क्रिय हैं । हम सभी एक ऑटोमेटिक व्यवस्था में बंधे हैं और उसी अनुरूप दिन-रात चौबीसों घंटे निरंतर अपने-अपने कार्य करते रहते हैं । उसमें फेर-फार करना हम लोगों को संभव नहीं। हम अधिक देर यहाँ ठहर नहीं सकते । अब आप मतलब की बात पर आइए और हमें बताइए कि आज यह मीटिंग किसलिए बुलाई है ?

जीवराज: आजकल राजतंत्र समाप्त होकर प्रजातंत्र का जमाना है । प्रजातंत्र में सत्ता वंशानुगत नहीं मिलती, योग्यता से हासिल की जा.....

अधर्म : (बीच में ही) राजतंत्र हो या प्रजातंत्र! हम तो वर्कर हैं, वर्कर ही रहेंगे ।

जीवराज : नहीं, नहीं । ऐसी बात नहीं । प्रजातंत्र में वर्कर भी राजा बन सकता है । बल्कि यह कहना चाहिए कि अच्छा काम करने वाला ही राजा बनता है ।

धर्म : पर हममें राजा बनने की इच्छा ही नहीं है । हम जहाँ हैं, जो हैं, जैसे हैं; वहाँ, वैसे ही संतुष्ट हैं ।

जीवराज : एक बार कल्पना में ही सही राजा बनकर तो देखो! सत्ता की कुर्सी पर बैठने का स्वप्न तो देखो, बस इच्छा तो अपने आप जागृत हो जाएगी । काम के समय ही तो हम स्वप्न देख सकते हैं, आराम के समय फुर्सत ही कहाँ? वे तो हमार आनंद के पल हैं,हमारे अपने हैं ।

धर्म : ऐसा करेंगे तो हम अपना काम समय पर कैसे कर पाएँगे ? यह तो मालिक के साथ गद्दारी हुई ! नहीं नहीं हम गद्दारी नहीं कर सकते ।

पुद्गल : (मन में)यह जीवराज इतनी बेवकूफी क्यों कर रहा है ? इन सभी में सत्ता की लालसा पैदा कर क्या अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी नहीं मार रहा ? अपना ही प्रतिद्वंदी खड़ा कर यह क्या प्रयोजन सिद्ध कर रहा है ?

(सोचने लगता है)

काल : (मन में) जीव सही कह रहा है । अभी तक तो बड़ा पद, महन्तपना प्राप्त करना हमें **लोमड़ी के अंगूर खट्टे** वाली बात थी; पर इस कलयुग में आज यदि हमें मौका मिल रहा है तो फिर क्यों न बैठे आराम से इस कुर्सी पर ? दिन-रात चलते - चलते थक गया हूँ मैं । आराम करना चाहता हूँ मैं अब । एकबार राजाओं के सुख भोगना चाहता हूँ ।

जीवराज : अच्छा, तो कोई बात नहीं । आप लोग नहीं बैठना चाहते हैं तो ना सही; इस कुर्सी पर मैं ही बैठ जाता हूँ ।

काल : जीवराज जी! आपने कहा था तो मेरी इच्छा कुर्सी पर बैठने की होने लगी है । कुछ समय मैं भी राज करना चाहता हूँ ।

आकाश : (मन में) काल राजगद्दी पर बैठ सकता है, तो मैं क्यों नहीं ? वो भी दो - निश्चय - व्यवहार, मैं भी दो लोक - अलोक । (प्रगट में) **सत्ता का सुख** मैं भी भोगना चाहता हूँ । पहले मैं ही बैठ जाता हूँ ।

अधर्म : एक बार मैं भी .....।

धर्म : (बात काटकर) एक बार मैं भी .....।

जीव : (मन में)पहले सब मना कर रहे थे, और अब ..... चलो इनमें इच्छा जागृत करने में तो मैं सफल हुआ । अब जब चाहे इनका वोट मैं अपनी बुद्धि से अपनी तरफ कर लूँगा ।

पुद्गल : (श्रोताओं से) भाई लोगों! सुना आपने!! कुर्सी बनी मुझसे कुर्सी रूप परिणामित मैं हुआ और हक ये पांचों जमा रहे हैं । पर अब मैं क्या करूँ ? अपना अधिकार कैसे प्राप्त करूँ? वे चारों अरूपी और मैं अकेला रूपी। वोटिंग में मैं हार जाऊंगा । अब तो मेरी कुर्सी पर कोई अरूपी ही बैठेगा, राज करेगा । (सोचकर) हाँ एक उपाय है । सत्ता के लिए लड़ते हुए यदि इन्हें आपस में और लड़ा दिया जाए, तो शायद मेरी बात बन जाए । अब तो **फूट डालो और राज करो** वाली नीति का अनुकरण करना पड़ेगा । जब कुर्सी के लिए उन पांचो में खींचातानी हो रही है, तो मुझे स्वयं अपना नाम प्रपोज करना अच्छा नहीं । अपना नाम देने से वे पांचों एक भी हो सकते हैं; पर यदि मैं काल के नाम का प्रपोज करूँ तो हारने पर वह मेरे नाम को प्रपोज कर सकता

है । काल तो हारने वाला है ही क्योंकि शेष चारों अरूपी उसका विरोध कर ही रहे हैं ।

(धर्म - अधर्म आदि पांचों से) भाईयो ! इस तरह आपस में क्यों लड़ रहे हो ? हम छहों के समूह से ही विश्व बना है । यदि हम आपस में लड़ेंगे तो विश्व में शांति कैसे रहेगी ? हम सब सहमति से इस कुर्सी का उत्ताराधिकारी चुनते हैं । हम सभी एक - एक कर आएँ और अपनी-अपनी विशेषताएँ बताएँ कि वे कुर्सी पर बैठकर विश्व की सुख समृद्धि और उन्नति में क्या सहयोग कर सकते हैं ? जो सर्वाधिक सक्रिय दिखाई देगा, वही इस कुर्सी का अधिकारी होगा ।

जीवराज : (श्रोताओं से) देखो! यह पुद्गल 'दिखाई देगा' कहकर हम रूपियों का पत्ता साफ कर खुद कुर्सी पर बैठना चाहता है । पर यह भूल गया है कि - मैं ज्ञानवान हूँ, इसके वाग्जाल में फँसने वाला नहीं । इसके कथन से ही इसे चित्त करूगाँ । (प्रगट में) पुद्गल ने सही कहा है - जो सर्वाधिक सक्रिय, बुद्धिमान दिखाई देगा, कुर्सी का अधिकारी वही होगा ।

पुद्गल : (मन में) अरे! इस जीव ने अपना तुरुप का इक्का फेंक दिया । बुद्धि में मैं इससे जीत नहीं सकता । फिर भी डरने की बात नहीं, **बुद्धिमानों का बहुमत कभी नहीं होता ।** लगता है जीव-अजीव का मुद्दा उठाकर ही अंत में मुझे बहुमत हासिल करना होगा । धर्म, अधर्म, आकाश, काल को अपने फेवर में करना होगा । **किंगमेकर तो यही हैं ।** चलो इनकी प्रशंसा कर इन्हें अपनी ओर मिलाता हूँ । (प्रगट में) मैं सोचता हूँ कि एक ही चीज को बार-बार देखकर बोर होने वाले, चेंजेज चाहने वाले हम सभी के परिवर्तन में निमित्त यह काल ही इस कुर्सी के सर्वाधिक योग्य है । अत: वे आएँ और अपनी उपयोगिता बताएँ ।

काल : मैं घड़ी, घंटा, मिनिट आदि के रूप में नित नए-नए अनेक रूप धारण करने वाला हूँ । आप पांचों में प्रतिसमय होने वाले चेंजेज का कारण मैं ही हूँ । हम सब में जिस समय,जो परिवर्तन होना होगा, वही होगा । जानते हो क्यों ? क्योंकि मेरे एक - एक अणु ने तुम्हारी एक-एक पर्याय निश्चित कर रखी है,

जिसे बदलना संभव नहीं । इसलिए यद्यपि मैं निष्क्रिय हूँ, पर महत्वपूर्ण हूँ परिणमन के रूप में समस्त वस्तुओं में समाया मैं तुम सबसे बड़ा हूँ, अत: इस कुर्सी का अधिकारी मैं ही हूँ ।

आकाश : देखो भाई! तुममें एक कमी है । तुम कालाणुओं में एकता नहीं है । तुम मेरे एक - एक प्रदेश पर बैठे हो । अत: असंख्य हो पर एकता न होने से तुम्हें एक - एक प्रदेश वाला ही कहा जाता है । यही कारण है कि तुमअस्तिकाय नहीं, फिर तुम हम अस्तिकाय पर राज कैसे कर सकते हो ? नहीं, तुम कुर्सी के अधिकारी नहीं हो सकते ।

अधर्म : अलोकाकाश मैं तुम्हारी गति न होने से तुम्हारा सर्वत्र होने का दावा भी झूठा ही है ।

जीवराज : जो तुम परिवर्तन कराते हो, वही तो हमारी सबसे बड़ी आफत है । हम एकरूप होकर रह ही नहीं पाते । नहीं चाहिए हमें तुम्हारा यह परिवर्तन। हम मेहनत कर सुख के चंद पल इकट्ठे करते हैं, जो तुम्हारे इस परिवर्तन के कारण झट से नष्ट हो जाते हैं । इस परिवर्तन से ही तो हम महादु:खी हैं । तुम इस कुर्सी पर बैठ गए, तो फिर हमारे दु:खों का अंत नहीं । नहीं तुम कुर्सी के अधिकारी नहीं बन सकते । रहा परिवर्तन का सवाल, तो जब हम अपनी मर्जी के मुताबिक परिवर्तन करेंगे,तभी सुखी होंगे । तुम्हारे इस महान सहयोग की हमें जरूरत नहीं है ।

काल : जीव महोदय! आप परिवर्तन के कारण दु:खी नहीं हैं । जो आप यह सोचते हैं कि -' हम अपनी इच्छा के अनुसार परिवर्तन करेंगे '। **दु:ख का मूलकारण यह इच्छा है ।** दूसरी बात यदि मेरे कारण परिवर्तन न हो तो गरीब,गरीब ही रहेगा, दु:खी,दु:खी । हो सकता है तुम सुखी या समृद्ध हो; पर तुम्हारे सभी साथी तो ऐसे नहीं । तुम परिवर्तन नहीं चाहते,परंतु तुम्हारे ही अन्य साथी परिवर्तन की प्रार्थना करते हैं । तुम जीव जाति में तकलीफ यही है-**जितनी मति उतने मत ।** तुम्हारे यहाँ तो कहावत भी प्रचलित है - **मुण्डे-मुण्डे मर्तिभिन्ना: ।**

धर्म : चलो यह बात मान भी लेते हैं कि परिवर्तन के बिना उन्नति नहीं, पर मात्र

परिवर्तन ही तो उन्नति नहीं है । दूसरी बात परिवर्तन में भी आप मात्र निमित्त हैं, वस्तुत: तो परिवर्तन हमारा सबका स्वभाव है । हमसभी द्रव्य हैं । द्रव्य होने से गुण-पर्याय वाले हैं । अत: मात्र परिवर्तन के आधार पर आप कुर्सी के अधिकारी नहीं हो सकते जो स्वयं पल - पल बदल जाता है, उससे हम अपने हित की आशा कैसे करें ? तुम स्थिर रहते नहीं कुर्सी पर कैसे बैठोगे ? निष्क्रिय हो; चल सकते नहीं, कुर्सी तक कैसे पहुँचोगे ? चलने में निमित्त तो मात्र मैं ही हूँ । मैं ही चलकर कुर्सी पर बैठ सकता हूँ, अत: कुर्सी का अधिकारी मैं ही हूँ ।

अधर्म : सक्रिय तो तुम भी नहीं, स्थिर तो तुम भी नहीं रहते । सदा चलने में ही निमित्त बनने वाले तुम बैठोगे कैसे ? बैठने में निमित्त तो मैं हूँ । मैं ही कुर्सी पर बैठ सकता हूँ अत: कुर्सी का अधिकारी मैं ही हूँ ।

जीवराज : (व्यंग्य से) बैठने की जरूरत क्या है उसे? चलते-चलते राज़ करेगा वह?

आकाश : अधर्म महोदय! आप स्थिर हैं सब जीवों के रुकने में निमित्त हैं; पर अवगाहन में, रहने में निमित मैं ही हूँ । मैं तुम सबसे बड़ा भी हूँ । मेरे लोक वाले हिस्से में ही आप रहते हैं, अलोक में आप सबका प्रवेश वर्जित हैं । मेरा वहाँ एकछत्र साम्राज्य है । मेरी वहाँ की सत्ता पर तुम अधिकार जमा ही नहीं सकते, अत: यहाँ की कुर्सी भी मुझे सौंप देना चाहिए ।

जीवराज : (व्यंग्य से) बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर ।

पुद्गल : बड़े हैं भाईसाहब! बड़ों का सम्मान करना ही चाहिए । हमें आपके कुर्सी पर बैठने पर कोई एतराज नहीं, पर आप दो जगह के राजा बनकर दो - दो कुर्सी पर कैसे बैठेंगे ? एक काम करते हैं । यह कुर्सी अलोकाकाश में ले जाओ और हम सब पर राज करो ।

काल : हाँ, हाँ ! पुद्गल जी सही कह रहे हैं । कुर्सी एक ही होना चाहिए ।

आकाश : यह कैसे संभव है ? कुर्सी पुद्गल की बनी है और अलोकाकाश में उसका प्रवेश संभव नहीं दो - दो जगह की नागरिकता तो भारत-अमेरिका भी नहीं देता ।

धर्म : तो फिर कुर्सी जिसकी बनी है, वही उस पर बैठने का अधिकारी है । भाईयों

आप लोगों का क्या कहना है ?

अधर्म, आकाश, काल : (एक साथ) हाँ, हाँ ! पुद्‌गल ही अधिकारी है । यही न्यायोचित है ।

(पुद्‌गल मुस्कुरा कर विजयी मुद्रा में जीव की ओर देखता है)

जीव : (उत्तेजना में) नहीं, नहीं ! यह नहीं हो सकता । यह जड,अचेतन, मूर्त्तिक; हम अमूर्त्तिक पर कैसे राज कर सकता है ? हम अमूर्त्तिक की परेशानियों को कैसे जान सकता है ? हमें देख सकता नहीं, हमारी परेशानी कैसे दूर करेगा ।

अधर्म : उचित कहा महोदय आपने ! चलिए आप ही ताज धारण कीजिए ।

आकाश : जीवराज ! ताज पहनने के पहले आप यह तो बताइए कि आप हमारे लिए क्या - क्या करेंगे ?

जीव : (विजय के लिए आश्वस्त जीव खुशी के जौम में) मैं सारे काम अपनी मनमर्जी से करूँगा । जैसे - किसे चलना है ? किसे रुकना है ? किसको कौन सा स्थान देना है ? किसमें परिवर्तन करना है — आदि सारी व्यवस्था मैं बनाऊँगा । आप सभी निश्चिंत होकर ऐश करना । पुद्‌गल पर भी मेरा नियंत्रण रहेगा । किस पुद्‌गल का क्या कार्य होगा ? उसके लिए मैं एक कमेटी गठित करूँगा, जिसका संचालन मेरे हाथ में होगा । विशेष क्या कहूँ ? मेरी मर्जी के बिना पत्ता भी नहीं हिलेगा । संक्षेप में कहूँ तो मैं ज्ञानस्वरूपी हूँ सत्ता की कुर्सी पर ज्ञानी ही बैठना चाहिए । यह अजीव हम जीवों पर राज कैसे कर सकता हैं ? (सभी जीव का भाषण सुनकर सकते में आ जाते हैं । पुद्‌गल चिंतित है, । जीव रौब से घूमता है ।)

काल : (धर्म, अधर्म, आकाश को साईड में ले जाकर) आपने ध्यान दिया भाईयों ! अमूर्त्तिक कहकर अपनी तरफ मिलाने की जीव की चाल थी ।

आकाश : हाँ, हाँ ! निश्चिंतता की बातें कर निठल्ला बनाकर यह हमें गुलाम बनाना चाहता है ।

धर्म : राजगद्दी पर वह हमेशा के लिए अपना वर्चस्व चाहता हैं । अंत में उसके मुंह से सही बात निकल ही गई - 'हम जीव पर अजीव कैसे राज कर

सकते हैं' ?

अधर्म : अच्छा तो यह हमारा पत्ता हमेशा के लिए साफ करना चाहता है । चलो पुद्‌गल की भी प्लानिं। सुन लें, उसका क्या इरादा है ।

पुद्‌गल : जीवराज! माना, तुम ज्ञ नस्वरूपी हो, पर मात्र ज्ञानस्वरूपी होने से तुम ज्ञानी तो नहीं हुए । काम तो तुम्हारे मूर्खों जैसे हैं । बदलने की इच्छा रखने वाले कर्तृत्व बुद्धि से ग्रस्त तुम ज्ञानवानों से हम जड़ भले । कम - से - कम पर में फेर - फार करने की बद्धि तो नहीं हममें! हम पर के कार्यों में हस्तक्षेप तो नहीं करना चाहते । यदि हम अन्यों के कार्य में हस्तक्षेप करेंगे तो दूसरा कोई हमारे कामों में भी हस्तक्षेप करेगा । सब एक दूसरे की टांग खीचेंगे तो काम कैसे होगा? व्यवस्था कैसे बनेगी ? सर्वत्र अराजकता का राज होगा ? अराजकता में कोई कैसे सुखी रह पाएगा ? भाईयो, सुनो ! जिसप्रकार जीव द्रव्य है, गुण - पर्यायों से युक्त है उसी प्रकार मैं भी द्रव्य हूँ, गुण - पर्यायों से युक्त हूँ । जीव के समान मैं भी अनंतगुण वाला हूँ । संसार में दिखाई दी जाने वाली सभी वस्तुओं में मैं समाया हूँ । यदि मैं इस सत्ता की कुर्सी पर बैठा तो सब अपने कार्य यथावत पहले जैसे ही करते रहेंगे । जिस - जिस समय जो पर मैं हस्तक्षेप करने की सोचेगा भी उसे मैं दंडित करूँगा, अपनी कैद में रखूँगा । मेरे शासन में सब व्यवस्था ऑटोमेटिक रहेगी! इस प्रकार मेरे सत्ता में आने पर सभी द्रव्य सुख-शांति पूर्वक अपना - अपना कार्य कर सकेंगे ।

चारों : (एक साथ) ठीक है, ठीक है । आप ही विराजिए इस कुर्सी पर । हमें तानाशाही जीव का राज स्वीकार्य नहीं, राजा तो आप जैसा निर्लिप्त ही होना चाहिए ।

जीव : नहीं, मुझे स्वीकार्य नहीं तुम्हारा यह फैसला ।

काल : क्यों स्वीकार्य नहीं? तुम जीव जाति में तो यही रिवाज है जब किसी बात में सर्व सम्मति नहीं होती, तो वोट डालकर बहुमत से काम किया जाता है ।

अधर्म : हाँ, हाँ । अब जब पद्‌गल के पक्ष में बहुमत हो गया तो आपको एतराज क्यों ?

जीव : नहीं, यहाँ बहुमत नहीं चल सकता क्योंकि मैं अकेला जीव, तुम पांच अजीव ।

बहुमत तो हमेशा तुम्हारा ही रहनेवाला है ।

धर्म : जीवराज! बड़े ज्ञानवान बने फिरते हो! यदि तुम्हें हमारा मत नहीं मानना था तो बुलाई ही क्यों हम अजीवों की सभा? हार गए तो जीवपना जताने लगे । हमारा अपमान करने का आपको कोई हक नहीं ।

काल : पुद्गल! चलो, चलें । इस पलटू जीव से दूर चलें । तुम समझदार हो । हमारे तो राजा तुम्हीं हो, हम अजीवों पर तुम राज करो ।

पुद्गल : (आवेश में) नहीं; मैं समझदार नहीं। समझ का मुझमें नाम नहीं । मैं जड़ हूँ । जड़ ही रहूँगा । अक्ल का ठेका तो जीव ने ले रखा है, उसे ही जाकर समझाइए ?

आकाश: ओ ज्ञानवान भाईसाहब ! वह नासमझ है, आप ही समझ जाइए । व्यर्थ झगड़ा करने से क्या फायदा ?

जीवराज : हमेशा हम समझदारों को ही नुकसान उठाना पड़ता है, बुद्धु तो बेफकूफी को हथियार बनाकर अपनी सब बात मनवा लेता है । क्या ज्ञानी होना हमारी कमजोरी है ? क्या ज्ञानी को हमेशा दबना चाहिए । समझाना तो नासमझ को चाहिए, पर आप मुझ समझदार को ही समझा रहे हैं ।

धर्म : भाईसाहब ! समझाया तो समझदार को ही जाता हैं, नासमझ को क्या समझाएँ ?

पुद्गल : (मन में) अरे आवेश में मैं क्या कह गया । अब यह सब जीव को ही बड़ा समझदार कहने लगे, ज्ञान की महिमा इन्हें समझ आ रही है, उसकी प्रशंसा करने लगे । कहीं उसे ही नेता न चुन लें । (प्रगट में, बड़प्पन की मुद्रा में) भाई लोगों ! आप मेरे साथी हो, मेरे लिए जीव के पास क्यों जाते हो ? किसी के सामने मेरे साथियों को झुकना पड़े, ऐसा राज मुझे नहीं चाहिए। मैं धिक्कारता हूँ ऐसी कुर्सी को । मैं त्याग करता हूँ इस कुर्सी का। इस जीव को राज करने दो । चलो हम चलते हैं ।

सभी : (एक साथ) वाह !वाह !! महान हैं आप । जिस कुर्सी के लिए सब झगड़ते हैं, वह कुर्सी पाकर भी आपने छोड़ दी । सच है हमारे यहाँ देने वाले से त्याग करने वाला महान होता है । देने वाला राजा होता है, तो छोड़ने वाला महाराज

कहलाता है ।

पुद्गल : (मन में) मुझे त्याग वाला महाराज नहीं, सत्ता वाला राजा बनना है । पर इस जीव को क्या हो गया ? यह चुप्पी साधे किन विचारों में गुम है ? मुझे रोक क्यों नहीं रहा ? क्या इसे पता नहीं कि यह मेरे बिना कुर्सी पर कैसे बैठेगा ? शायद कुर्सी मिलने की खुशी में भूल गया है । मुझे स्टाइल से इसे याद दिलाना होगा, ताकि यह मुझे जाने से रोके । (प्रगट में) जीवभाई! मैं जा रहा हूँ, तुम निश्चिंत होकर रूपियों पर राज करना ।

जीव : (मन में) हैं! क्या कहा इसने- रूपियों पर । अरे! इस संसार में जो कुछ दिखाई दे रहा है, वह रूपी पदार्थ हैं । रूपी पर राज के लिए रूपी का सहयोग चाहिए । कुर्सी पर बैठने के लिए भी शरीर पुद्गल का साथ चाहिए । (पैंतरा बदलकर प्रगट में) अजी भाईसाहब! बहुमत आपके साथ है, आप कैसे जा सकते हैं ? आइए, आइए ! आप भी मेरे साथ इस कुर्सी पर विराजिए ! हम दोनों मिलकर शासन करेंगे, राज करेंगे । भाईजी ! आज कल तो सब जगह मिली - जुली सरकार बन रही है, जिसमें सब मिल - जुलकर काम करते हैं ।

पुद्गल : (मन में) इसके बिना मैं अकेला भी कुछ काम नहीं कर सकता । भले मेरे साथ बहुमत है, पर लीडर नहीं, ज्ञान नहीं । शासन करने के लिए ज्ञानवान का साथ तो चाहिए ही । चलो अपनी शर्तें मनवाकर इसकी बात मानता हूँ । (प्रगट में) देखो! मैं तुम्हारे साथ इस कुर्सी पर बैठ जाऊँगा और प्रधानपद भी तुम्हें दे दूँगा, पर शेष सभी मंत्रालय मेरे कब्जे में होंगे । तुम कुछ भी मेरी मर्जी के बिना नहीं करोगे । मुझे पुद्गल - पुद्गल नहीं जीव नाम से ही पुकारोगे ।

जीव : (मन में)जड़ है, जड़ता की ही शर्तें रख रहा है । जब पुद्गल को ही जीव पुकारेंगे तो शासन तो मेरा ही रहा । पुद्गल को कौन जानेगा ? रही उसकी मर्जी की बात, सो एक बार मुझे कुर्सी पर बैठने दो, ताजपोशी होने दो । यह समझता नहीं मर्जी उसी की चलती है, जो प्रधानपद पर होता है । वो बेवकूफ जड़ प्रधानपद तो मुझे ही दे रहा है । (प्रसन्नता से प्रगट में) ठीक

है ! ठीक है !! तुम जैसा कहोगे, वैसा ही होगा । बस; अब और कुछ ।

पुद्गल : (मन में) यह इतनी आसानी से कैसे मान गया? कुछ दाल में काला जरूर है । कहीं मैं कुछ गलत तो नहीं कह गया । मेरा नाम बदलने की बात पर मुस्कराया था । जरूर इसमें कोई राज है! (सोचता है) अच्छा तो यह बात है । मुझसे गलती हो गई । यदि सभी पुद्गल को जीव कहेंगे, तो कोई पुद्गल को जानेगा ही नहीं, नाम भी जीव का ही चलेगा, परंपरा उसी की रहेगी । जब मेरा नाम ही न रहा, तो काम से क्या फायदा? मेहनत मैं करूँ, यश वो लूट ले जाए । पर अब क्या करूँ । सबके सामने प्रपोजल मैंने रखा है । बात से पलटता हूँ, तो इन्सल्ट मेरी होगी? पर अब मेरी शासन परंपरा कैसे चलेगी? कैसे? मैं जीतकर भी हार गया । बस, यहीं ज्ञान की कमी अखरती है । अब मैं और कुछ नहीं कर सकता, पर जीव की कर्तृत्व बुद्धि की सजा निश्चित करवा सकता हूँ, उसकी अनंत शक्तियों को सीमित करवा सकता हूँ ।

जीवराज : किन विचारों में खो गए तुम ?

पुद्गल : बस यही सोच रहा था कि तुम जीव अनंत, हम पुद्गल अनन्तानन्त इनमें सत्ता की कुर्सी पर कौन बैठेगा? यह भी निश्चित हो जाए तो अच्छा है ।

जीवराज : हाँ, हाँ, होना ही चाहिए । सब कुछ अभी सबके सामने हो जाए तो अच्छा है । तुमने इस बारे में कुछ सोचा है?

पुद्गल : (मन में) 'सोचा है'- पूँछकर मेरी प्लानिंग जानना चाहता है । (प्रगट में) जीवराज जी ! (व्यंग्य से) सोचना हमारा काम नहीं । अपने साथियों से सलाह - मशविरा, सोचविचारपूर्वक प्लानिंग — यह सब काम तो आपके हैं । हमारे में तो एक व्यवस्थित व्यवस्था है । सबके कार्य निश्चित हैं जैसे — हम पुद्गलों में जो परमाणु औदारिक शरीर रूप परिणमित होकर, तुम्हें अपने में समा सके, अपने में प्रवेश करा सके, वे ही सत्ता की कुर्सी पर बैठेंगे । तुम्हारी जाति में जो जीव दयालु, परोपकारी, सेवाभावी होंगे वे ही इस के हकदार होंगे । स्वार्थी, (अत्मार्थी) जीवों का यहाँ काम न होगा । जो जीव

मात्र अपने बारे में सोचते हैं, स्वयं को जानते-देखते हैं और मात्र अपने में ही लीन रहते है; वे लोकाकाश, अलोकाकाश की सीमा पर सिद्ध लोक में रहेंगे । वहाँ वे अपनी पूर्ण शक्तियों के साथ रह सकते हैं । पूर्ण शक्ति संपन्न उन्हें मैं अपने औदारिक शरीर की सेवाएँ नहीं दे पाऊँगा किन्तु जो औदारिक शरीर में रहेंगें, उन संसारी जीवों को सीमित शक्तियों से ही काम चलाना होगा ।

जीव : (प्रसन्नता की मुद्रा में) जी, जैसा आप कहें, वैसा ही होगा ।

काल : (पुद्गल को बाजु में ले जाकर) पुद्गल! शासन चलाने का हकदार बनकर क्या तुम पागल हो गए हो? जीव पर इनामों की बौछारें करते जा रहे हो । कर्तृत्व की बुद्धि से ग्रस्त जीवों को सजा का कोई प्रावधान नहीं कर रहे हो ।

पुद्गल : वही तो कर रहा हूँ । बस बात करने का तरीका बदला है, अत: तुम समझे नहीं । देखो यह ज्ञानवान जीव मानी है । यदि इसके मान को ठेस पहुंचाते हुए सीधे सीधे कहेंगे कि - 'यदि तुमने पर पदार्थों में फेर-फार करने की बुद्धि की तो तुम्हें औदारिक पुद्गल की जेल में रहना पड़ेगा', तो यह अभी बखेड़ा खड़ा कर देगा, शांति से चुनाव संपन्न नहीं होने देगा । तुम चारों अरूपी हो, पर निष्क्रिय हो; मैं सक्रिय हूँ, पर जड़ हूँ, अत: हम उतने सशक्त नहीं । हमें उसे वाग्जाल में फँसाकर ही अपनी बात मनवानी पड़ेगी। देखो! दया परोपकार कहने में अच्छे लगते हैं, पर हैं ये कर्तृत्व बुद्धि के ही रूप । इनका ईनाम नहीं, मैंने सजा दी है । उन्हें अपनी कैद में रखवाया है, ताकि जीव की शक्तियाँ सीमित हो जाएँ, वो मेरे वश में रहे । अपनी ज्ञान शक्ति प्रगट करने में भी उसे मेरा सहारा लेना पड़े । इस प्रकार जीव जीतकर भी हारेगा और मैं हारकर भी जीतूँगा ।

काल : अच्छा अब मैं समझ गया । सिद्धपना जिसे तुम सजा रूप में प्रस्तुत कर रहे हो, वह उनका ईनाम हुआ । उन्हें तुमने अपनी कैद से मुक्त कर दिया ।

पुद्गल : हाँ, हाँ, ऐसा ही है ।

काल : तुम सही लाईन पर जा रहे हो । हम अब निश्चिंत हुए । हम चारों चलते हैं, अपने - अपने काम करते हैं । तुम दोनों अपने-अपने कार्य निश्चित कर शासन सफलता पूर्वक चलाना । चलो भाईयो, चलो हम चलते हैं । (धर्म, अधर्म, आकाश, काल बाहर निकल जाते हैं ।)

(रास्ते में चलते हुए)

धर्म : कालजी ! पुद्गल से तुम्हारी अकेले में क्या बातचीत हो रही थी ? उन दोनों को लड़ने को छोड़कर क्यों चले आए ?

काल : देखो ! पुद्गल भी जीव के साथ रहकर होशियार हो गया है । वे दोनों सीधी बात करते नहीं, उनकी चालबाजी हम समझते नहीं । हम सबको कुर्सी पर बैठना ही नहीं था । उन्होंने हमें उकसाया,लड़ाया । हम भावावेश में क्षणिक उत्तेजना में आकर व्यर्थ लड़े । हम सभी अपनी अपनी योग्यता और कमजोरी जानते हैं । **हम किंगमेकर हैं, पर किंग नहीं बन सकते ।** हमें तो अपने काम से ही मतलब रखना होगा । उनके साथ रहने पर हमें कोई फायदा भी नहीं । वे दोनों अपनी मनमानी करने वाले हैं । हमारी सुनने वाले नहीं हैं, बस जरूरत पड़ने पर हमें कोई हथियार तो कोई ढाल बनाता है ।

तीनों : आाप तो त्रिकाल की बातें जानते हैं । इन दोनों का भविष्य क्या है ?

काल : ये दोनों प्रारंभ में मिल-जुलकर काम करेंगे । धीरे धीरे जीव अपनी शक्तियों का जोर आजमाना प्रारंभ करेगा, पुद्गल पर हावी होने लगेगा तो पुद्गल चिढ़कर शरीर को शिथिल करेगा । जब जीव अपनी शक्तियों का प्रयोग नहीं कर पाएगा, उसे कानों से सुनना बंद हो जाएगा, आँखों से दिखना; तो गुस्से में आग - बबूला होकर वह शरीर छोड़ देगा जिससे शरीर में कीडे पड़ेंगे वह गल जाएगा, सड़ जाएगा या अन्य द्वारा जला दिया जाएगा ।

धर्म : जीव शरीर छोडकर कहाँ जाएगा, कहाँ रहेगा ?

काल : मिथ्यात्व जिनका साथी है ऐसा जीव शरीर के बिना अधिक समय नहीं रह सकता । अल्पकाल में ही वह दूसरे शरीर की शरण में चला जाता है ।

अधर्म : एक बार दुर्दशा होने पर पुद्गल जीव को अपनी शरण में क्यों लेगा ?

काल : जिस प्रकार पशुओं को पूर्वजों के अनुभव का लाभ नहीं मिलता, वे सब कुछ ठोकर खाकर ही सीखते हैं उसी प्रकार पुद्गल को भी स्मृति नहीं, पूर्व संस्कार नहीं, अत: ठोकर खाकर ही वह सीखता है । वह जीव द्वारा किया गया पुराना सलूक भूल जाता है और पुन: जीव के द्वारा शरण मांगने पर अपने साथी कर्मों की इच्छानुसार उसका साथ देने लगता है । यही क्रम अनादि से चल

रहा है, अनंतकाल तक चलता रहेगा ।

आकाश : पर जीव को तो स्मृति होती है । पूर्व संस्कार रहते हैं ।

काल : नए शरीर में प्रवेश करते ही अधिकतर जीवों में पुराने शरीर की स्मृतियाँ नहीं रहतीं । वे वर्तमान शरीर में ही अपनत्व करते रहते हैं । जब तक यह अपनत्व बुद्धि रहती है, तभी तक वे शरीर की कैद में रहते हैं । जब ये जीव शरीर से अपनत्व बुद्धि तोड़कर, अपनी शक्ति को पहचान कर, अपने में लीन हो जाता है; तब वह अपनी अनन्त शक्तियों को प्राप्तकर शीघ्र ही इस शरीर का साथ छोड़ देता है ।

धर्म : जो जीव शरीर का साथ छोड़ देते हैं, वह कहाँ रहते हैं ?

काल : वह लोकाकाश के ऊर्ध्वभाग में सिद्धशिला में रहते हैं ।

अधर्म : तो क्या पुद्गल इसी को सजा कह रहा था ?

काल : हाँ, हाँ । वास्तव में वह जीव की सजा नहीं; अपितु उसकी निर्मल अवस्था है, सुखी अवस्था है । उस अवस्था में वह पुद्गल के आधीन नहीं । अत: उस दशा को सजा रूप में प्रस्तुत कर पुद्गल जीव को उस स्थिति से दूर रखना चाहता है ।

आकाश : पर जीव तो ज्ञानवान है, कब तक भ्रम में रहेगा ? कभी तो समझेगा ।

काल : जब तक मिथ्यात्व जैसे साथी जीव के साथ हैं, तब तक वह भ्रम में ही रहता है; पुद्गल के अनेकों रूपों के साथ में ही सुख खोजता रहता है । कोई - T.V चाहता है, तो कोई कम्प्यूटर; कोई कार चाहता है तो कोई बंगला । जीव इन्ही बाह्य वस्तुओं धन- संपत्ति आदि में सुख खोजता फिरता है । जब कि सुख ज्ञान में है । जीव तो वास्तव में ज्ञान की प्राप्ति के प्रयास में ही रहता है, पर पुद्गल जीव की सहायता के बिना राज नहीं कर सकता अत: वह अपना सर्वस्व दांव पर लगाकर, अपना नाम खोकर भी जीव को अपने में उलझाए रखता है । जब तक जीव उसकी चाल नहीं समझता, तब तक पुद्गल की कैद में रहता है । जब पुद्गल का पैंतरा वह समझ जाता है, तो अपने में लीन होकर कैद से मुक्त हो जाता है ।

धर्म : जीव ज्ञानवान, बुद्धिमान, समझदार होकर भी पुद्गल की पैंतरेबाजी में कैसे

फँस जाता है ?

काल : जीव की कमजोरी है- यश, मान, सत्ता । पुद्गल अपना सब कुछ खोकर भी जीव की उन लालसाओं की पूर्त्ति करता है । कभी सत्ता का प्रलोभन दिखाता है, कभी मान के घोड़े पर चढ़ाता है, तो कभी यश का लोभ दिखाता है । यह अपनी होशियारी से दो जीवों को लड़ाता भी है ।

आकाश : वह कैसे ?

काल : रुपए - पैसे, धन - संपत्ति रूप पुद्गल एक भाई से उछल - उछलकर दूसरे भाई के पास चला जाता है । बस दोनों भाई लड़ पड़ते हैं ।

अधर्म : यह सब करके पुद्गल को क्या मिलता है?

धर्म : पुद्गल को क्या मिलना? बस समझ लो कुछ लोगों की प्रवृत्ति ही ऐसी होती है, उन्हें दूसरों को लड़ाने में ही मजा आता है ।

काल : एक बात है-**सत्ता का सुख** पुद्गल को जीव के संयोग से ही मिल पाता है ।

आकाश : इसका मतलब यह हुआ कि न अकेले जीव राज कर सकता है, न अकेले पुद्गल । कुर्सी पर बैठने के लिए दोनों को एक दूसरे का सहयोग चाहिए ।

काल : हाँ, हाँ । यह समस्त संसार जीव- पुद्गल की मिली-जुली सरकार है और हम चारों तो गति-स्थिति,अवगाहन और वर्तन में निमित हैं,चाकर हैं ।

धर्म : आप पुद्गल का पक्ष ले रहे हैं, उसकी तरफ से बोल रहे हैं - जैसे वही बलवान हो, वही जीव को नचा रहा हो जब कि हमने तो सुना है - 'जीव अपनी भूल से दुःखी है, भूल सुधार कर वह स्वयं सुखी हो सकता है । परद्रव्य उसमें कुछ कर सकते नहीं ।'

काल : वह दृष्टिकोण दूसरा है । उसकी चर्चा फिर करेंगे । अभी समय बहुत हो गया, मैं जा रहा हूँ ।

धर्म : जाते-जाते यह तो बताते जाइए कि दोनों में से कौन हारा? कौन जीता?

काल : इसका निर्णय तुम स्वयं करो, मैं चला ।

धर्म : (श्रोताओं से) भाईओ, मैं दौड़ सकता हूँ, सोच नहीं सकता। आप ज्ञानस्वरूपी हैं, पुद्गल की कैद में हैं, आप ही सोचिए कि -

कौन हारा ? कौन जीता ?

लेखिका का परिचय

डॉ. शुद्धात्मप्रभा टड़ैया, ललितपुर - झाँसी के प्रसिद्ध एडवोकेट श्री अभिनंदन कुमारजी टड़ैया के सुपुत्र श्री अविनाशकुमार टड़ैया की धर्मपत्नी हैं । आपका जन्म अशोकनगर (मध्य प्रदेश) में ३० जनवरी १९५८ को हुआ । आपने बी.ए. (ऑनर्स) संस्कृत में स्वर्णपदक प्राप्त किया । एम.ए. में लघु शोध में व पी.एच.डी. के शोध -प्रबंध में भी आपने जैनाचार्यों एवं उनकी कृतियों को ही अपनी शोध-खोज का विषय बनाया है ।

अध्यात्मिक वातावरण एवं धार्मिक संस्कारों में पलीपुसी डॉ. शुद्धात्मप्रभा निरंतर अध्ययनशील रही हैं । सम्प्रति वह अपने परिवार के साथ मुंबई में रहती हैं । जहाँ आपके पति का हीरे-जवाहरात एवं डायमंड ज्वैलरी का व्यवसाय है । मुंबई में आप अवैतनिक रूप से आध्यात्मिक कक्षाओं एवं सामाजिक शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों व धार्मिक कार्यक्रमों का संचालन करती ही हैं । जैन जागृति एवं धर्म के प्रचार-प्रसार में आपका सराहनीय योगदान हमेशा रहता है । विगत तीन वर्षों से वे बालकक्षाओं का भी सफल संचालन कर रही हैं ।

धार्मिक एवं साहित्यिक अभिरुचि आपकी पैतृक संपदा है । अत: गृहस्थी के जंजाल एवं सामाजिक गतिविधियों से भी कुछ न कुछ समय निकालकर अध्ययन-मनन एवं लेखन से नवीन सृजन में व्यस्त रहती हैं । जैन पुराण के आधार पर लिखी गई **राम कहानी** एवं युवा वर्ग में धार्मिक संस्कार देने की दृष्टि से पत्र शैली में लिखी **विचार के पत्र विकार के नाम** और पद्यात्मक संवादों में लिखी **मुक्ति की युक्ति** एवं जैन दर्शन के सिद्धान्तों को संक्षेप में प्रस्तुत करने वाली **जैनदर्शनसार** कृति इसी अभिरुचि का परिणाम है । बाल मनोविज्ञान व बाल मनोभावों को समझते हुए उनके सरल मन को धार्मिक ज्ञान देने के लिए आधुनिक शैली में लिखी गई जैन **नर्सरी, जैन के. जी. भाग १,२ और ३** बालकों को लुभाने में अत्यंत सफल रही हैं ।

लेखिका की अन्य कृतियाँ

१) जैन नर्सरी (हिंदी, गुजराती, मराठी और अंग्रेजी)
२) जैन के. जी. भाग - १(हिंदी, गु., म. और अंग्रेजी)
३) जैन के. जी. भाग - २ (हिंदी, गु., म. और अंग्रेजी)
४) जैन के. जी. भाग - ३(हिंदी, गु.,म. और अंग्रेजी)
५) आ. कुन्दकुन्द और उनके टीकाकार- एक सामालोचनात्मक अध्ययन(शोध प्रबंध)
६) आ. अमृतचंद और उनका पुरुषार्थसिद्धयुपाय (लघु शोधनिबंध)
७) चलो पाठशाला: चलो सिनेमा भाग-१
८) विचार के पत्र विकार के नाम
९) संस्कार का चमत्कार
१०) तलाश: सुख की
११) मुक्ति की युक्ति
१२) प्रमाण ज्ञान
१३) राम कहानी
१४) जैनदर्शनसार